चन्दामामा
जनवरी १९७८
Rs 1.25

चन्दामामा

जनवरी १९७८

Printed by B. V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for CHANDAMAMA CHILDREN'S TRUST FUND (Prop. of Chandamama Publications) 2 & 3, Arcot Road, Madras-600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI. CHANDAMAMA is published monthly and distributed in U.S.A. by Chandamama Distributors, West Chester PA 19380. Subscription 1 year $ 6-50. Second Class Postage paid at West Chester, PA.
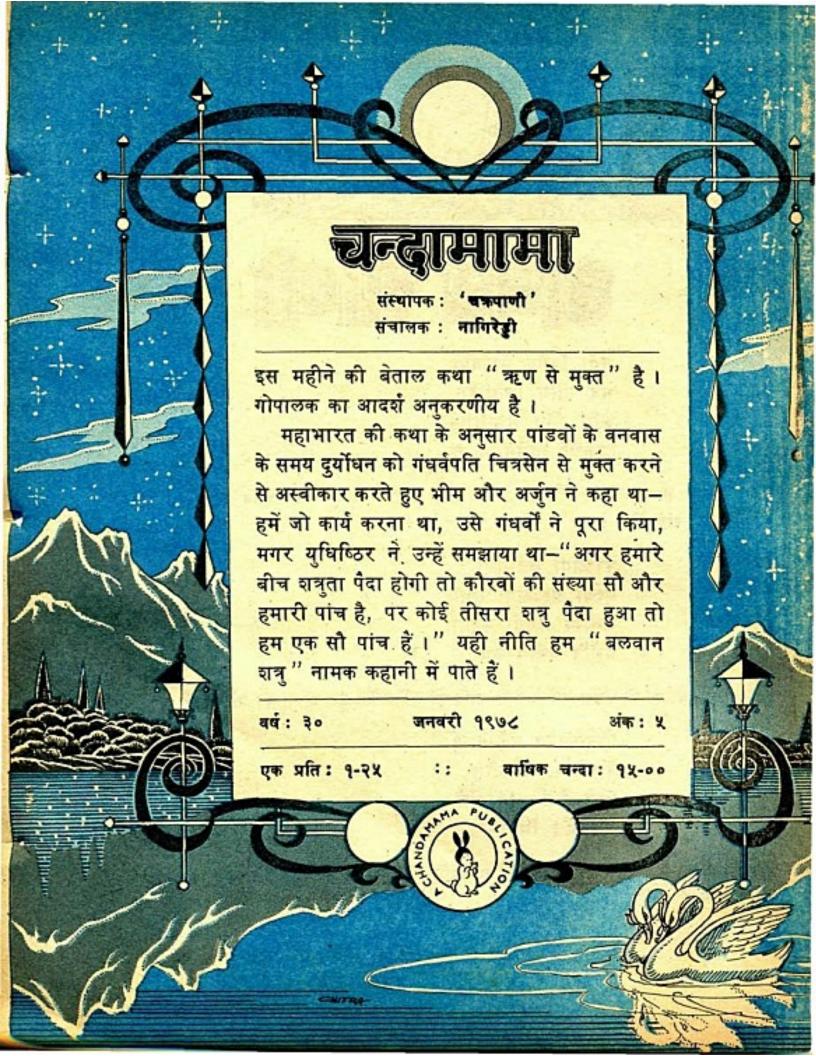
चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी

इस महीने की बेताल कथा "ऋण से मुक्त" है। गोपालक का आदर्श अनुकरणीय है।

महाभारत की कथा के अनुसार पांडवों के वनवास के समय दुर्योधन को गंधर्वपति चित्रसेन से मुक्त करने से अस्वीकार करते हुए भीम और अर्जुन ने कहा था–हमें जो कार्य करना था, उसे गंधर्वों ने पूरा किया, मगर युधिष्ठिर ने उन्हें समझाया था–"अगर हमारे बीच शत्रुता पैदा होगी तो कौरवों की संख्या सौ और हमारी पांच है, पर कोई तीसरा शत्रु पैदा हुआ तो हम एक सौ पांच हैं।" यही नीति हम "बलवान शत्रु" नामक कहानी में पाते हैं।

वर्ष : ३० जनवरी १९७८ अंक : ५

एक प्रति : १-२५ :: वार्षिक चन्दा : १५-००

भूयो विनय मास्थाय
भव नित्यं जितेन्द्रियः,
काम क्रोध सुमुत्थानि
त्यजेथा व्यसनानि च ॥ १ ॥

[तुम विनयशील व जितेन्द्रिय बने रहो और काम, क्रोध आदि से उत्पन्न होनेवाले व्यसनों को त्याग दो।]

परोक्षया वर्तमानो
वृत्त्या प्रत्यक्षया तथा,
अमात्य प्रभृती स्सर्वाः
प्रकृति श्चानुरंजय ॥ २ ॥

[तुम प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से मंत्री आदि को आदेश देते हुए जनता को प्रसन्न रखो।]

तुष्टानुरक्त प्रकृति र्यः
पालयति, मेदिनीम्
तस्य नंदंति मित्राणि
लब्दामृत मिवामराः ॥ ३ ॥

[प्रजा को संतुष्ट रखते शासन करनेवाले को देख अमृत प्राप्त किये देवताओं की भांति मित्र प्रसन्न हो जाते हैं।]

राजा के लिए हितवचन

काकोलूकीयम

[५४]

रक्ताक्षी ने सांप की कहानी सुनाकर कहा–"हम स्थिरजीवी का वध करके इस बरगद के राज्य पर अधिकार कर निर्भयतापूर्वक अपने दिन बितायेंगे।"

इसके बाद अरिमर्दन ने क्रूराक्षी की राय मांगी। क्रूराक्षी ने कहा: "मैं रक्ताक्षी की सलाह से सहमत नहीं हूँ। हमारी शरण में आये हुए इस असहाय कौए का वध करना मेरा अभिमत नहीं है। क्या आपने राजा शिवि की कहानी नहीं सुनी? एक पक्षी की भी कहानी नहीं सुनी?"

"वे कैसी कहानियाँ हैं?" अरिमर्दन ने पूछा। इस पर रक्ताक्षी ने यों उत्तर दिया–"प्राचीन काल में राजा शिवि बहुत ही लोक प्रिय थे। भारत के सभी राजा उनके सामंत थे। राजा शिवि अत्यंत दयालू और महान दाता थे। उनकी दानशीलता का समाचार स्वर्ग तक पहुँचा। इन्द्र ने स्वयं यों सोचा: "शिवि जैसे दाता दूसरे कोई नहीं हैं। इस प्रकार अपार दान देने में उनका विचार क्या होगा? वे क्या यश के लोभ में पड़कर यों दान दे रहे हैं? अथवा असहायों के प्रति वास्तव में दया उत्पन्न होने के कारण?"

इन संदेहों का निवारण करने के ख्याल से इन्द्र ने यमराजा को बुला भेजा और एक योजना बनाई।

एक दिन प्रात:काल राजा शिवि अपने काल कृत्यों से निवृत्त होकर सभा भवन में आ बैठे। इन्द्र एक कबूतर का वेष धर कर राजोद्यान से होकर उड़ते हुए सभा भवन में आये। यमराज एक बाज बनकर उस कबूतर का पीछा करते हुए आये। थकावट के मारे हांफते, भय के कारण

कांपते, सहमी आँखों से कबूतर राजा शिवि के चरणों पर आ गिरा।

"राजन, मैं आपकी शरण में आ गया हूँ? बाज से मेरी रक्षा कीजिए।" कबूतर ने प्रार्थना की।

उसी समय वहाँ पर बाज आ पहुँचा और बोला—"राजन, कबूतर को छोड़ दीजिए। मैं भूखा हूँ। मेरा आहार मुझे दे दीजिए।"

"महाराज! शरण में आये हुए प्राणी की रक्षा करना आपका धर्म है।" कबूतर ने कहा।

"राजन! मैंने सुना है कि आपके पास जो भी आर्त आवे और वह जो भी मांगे, सो दे देते हैं। यह कबूतर न्यायपूर्वक मेरा आहार है। मैं भूख से तड़प कर मरा जा रहा हूँ।" बाज ने कहा।

"बुद्धिमान लोग शरणागतों की रक्षा करते हैं। मैं अपनी रसोई से आपके लिए आवश्यक सारा मांस मँगवा देता हूँ। आप कबूतर को छोड़ दीजिए।" राजा शिवि ने कहा।

"किसी के द्वारा मारे गये प्राणियों का बाज कभी स्पर्श नहीं करते। सजीव प्राणियों का मांस ही हम खाते हैं। इसलिए आप इस कबूतर के बराबर का अपना मांस दे दीजिए। मैं इस कबूतर को छोड़ दूंगा।" बाज ने उत्तर दिया।

"अच्छी बात है; मैं अपना ही मांस दूंगा।" इन शब्दों के साथ राजा ने अपने कोशागार से तराजू लाने की आज्ञा दी।

ये शब्द सुनकर सभा में उपस्थित राजा और नागरिक भी हाहाकार मचाते हुए बोले—"महाराज, यह बाज आप का अंत करने के लिए आया हुआ कोई राक्षस है।" पर राजा ने उनकी बातों पर ध्यान न दिया।

इस बीच तराजू लाया गया। राजा ने एक पलड़े में कबूतर को रखा और अपनी जांघ में मांस काट कर दूसरे पलड़े में डाला। फिर भी कबूतर का पलड़ा भारी ही रहा। अंत में राजा शिवि खुद उस

पलड़े में बैठ गये । इस अपूर्व त्याग पर देवदुंदुभियाँ बज उठीं । आकाश से फूलों की वर्षा हुई । सभी दिशाओं से अशरीर वाणियाँ गूँज उठीं—"शबाष! शबाष!"

इस पर इन्द्र और यमराज वास्तविक रूप में प्रत्यक्ष हो बोले—"राजन! आपका त्याग अपूर्व है । हमने प्राणियों के प्रति आपके अपार प्रेम को देखा । आप अकेले ही सत्य को पहचाननेवाले व्यक्ति हैं । आपका शरीर पूर्ववत् हो जाएगा ।" यों कहकर वे दोनों अदृश्य हो गये ।

आत्मार्पण करनेवाले पक्षी की कहानी

जाल बिछाने में कुशल एक बहेलिया जंगल में ताक में बैठा था, तभी भयंकर आंधी-वर्षा हुई । बहेलिया भीग गया और उसने एक पेड़ के नीचे आश्रय लिया ।

उस पेड़ पर पक्षियों का एक जोड़ा था । मादा पक्षी कहीं बाहर गई थी । नर पक्षी अपनी पत्नी के वास्ते घबराने लगा । इतने में मादा पक्षी लौट आई और हालत पर उसे दया आई । बहेलिये ने पक्षियों से बिनती की कि वे उसकी भूख और सर्दी की पीड़ा से मुक्त करें ।

नर पक्षी ने अपने घोंसले में से पत्ते व तीलियाँ निकालकर जमा किया और उसके ढेर में आग लगा दी, तब बहेलिये को बुलाकर अपने हाथ सेंकने को कहा । बहेलिये ने बताया कि वह भूख से मरा जा रहा है । अपने अतिथि को देने के लिए कुछ न पाकर नर पक्षी उस आग में गिरते हुए बोला कि बहेलिया उसे खाकर अपनी भूख मिटा ले ।

"अपने पति के बिना मैं कैसे ज़िंदा रह सकनी हूँ?" यों कहते मादा भी उन लपटों में गिर पड़ी । इस पर उन पक्षियों की जोड़ी को एक स्वर्ण रथ स्वर्ग में ले गया ।

इस दृश्य को देख बहेलिया अपने क्रूरतापूर्ण जीवन पर दुखी हुआ । उसने पक्षियों का मांस नहीं खाया, जंगल से होकर जाते हुए दावानल को देखा और उसमें गिरकर वह भी जल मरा ।

१९२. समुद्र द्वारा सृजित गुफा

इस चित्र में दर्शित गुफा अल्यूषियन टापुओं में से एक टनगा टापू का है। कृत युग में यहाँ पर अग्नि पर्वत फूटा और ७० फुट की परत के रूप में उसका शिलाद्रव जम गया। उसके ठण्ड हो सिकुड़ने पर उसमें फटासें उत्पन्न हुई। इसके कई हजारों साल बाद समुद्र के धक्के से यह गुफा निर्मित हुई। इसकी गहराई ७५ फुट की है।

माया सरोवर

[२४]
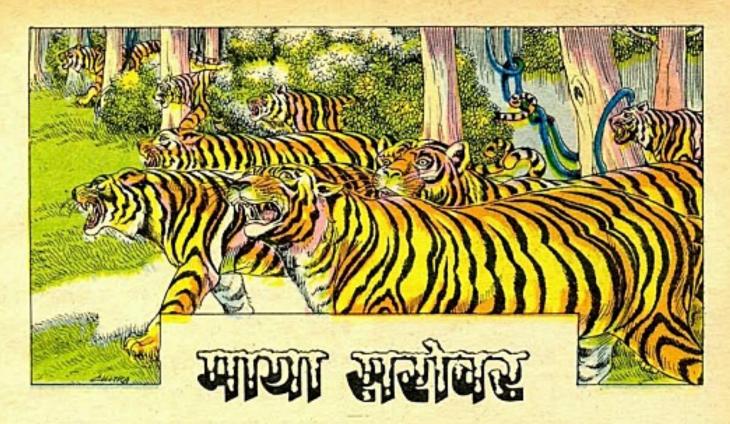
[हँसों के रथ पर हमला करनेवाले जलवृक राक्षसों का सामना करके जयशील तथा उसके अनुचरों ने वध किया। माया सरोवरेश्वर तथा कांचनमाला रथ पर से जिस जंगल में गिर गये थे, वहाँ पर सफ़ेद धुए के उठते देख सब लोग उस ओर चल पड़े। बाद–]

हँसों का रथ जब उलट गया, तब उसमें से खिसक कर माया सरोवरेश्वर, कांचनमाला और रथ सारथी–तीनों जंगल में एक स्थान पर नहीं गिरे, अलग-अलग स्थानों पर गिर पड़े। माया सरोवरेश्वर को तो एक विचित्र अनुभव का मौक़ा मिला।

माया सरोवरेश्वर हँसों के रथ पर से जहाँ गिरा था, वहाँ पर नरभक्षी लोग निवास करते थे। उन्हें इधर एक सप्ताह से शिकार खेलने के लिए एक भी जंगली जानवर दिखाई न दिया था। इसका कारण यह था कि दूर से शिकार की खोज में बाघों का एक झुंड उस प्रदेश में आ पहुँचा था। उस झुंड ने जंगल में जो भी शिकार मिला, उसे मार कर खा डाला था। उस झुंड का गर्जन सुनकर जंगली जानवर सब घबरा गये और डर

के मारे वे सब निकट के पहाड़ पार करके दूर भाग गये थे।

नरभक्षियों के सरदार का नाम शेरसिंह था। उसे मालूम हुआ था कि उसके थोड़े अनुचर उसके दल को छोड़ भागने की कोशिश में हैं। उसे लगा कि उसके पुरखे कई पीढ़ियों से जहाँ रहते आये हैं, उस प्रदेश को छोड़ कर चला जाना महान पाप है। उसका कहना है कि वे लोग अगर उस प्रदेश को छोड़ चले जाते हैं तो जटाओंवाले बरगद की छाया में स्थित शिथिलालय के जंगली देवता को साल-भर में एक बार भी सही, नर मांस का नैवेद्य चढ़ानेवाले कौन हैं? अगर इस प्रकार अपने देवता की समय पर पूजा-आराधना न हुई तो उसका फल उसकी जाति को भोगना पड़ेगा।

शेरसिंह ने यों विचार करके निर्णय किया कि किसी भी उपाय से सही अपनी जाति के लोगों को उस प्रदेश को छोड़कर जाने से रोकना चाहिए। इसलिए इसके लिए आवश्यक शक्ति प्रदान करने की प्रार्थना करने के वास्ते वह जटाओंवाले बरगद के नीचे स्थित जंगली देवता के मंदिर की ओर चल पड़ा।

वह मंदिर अत्यंत पुराना था। उसके दर्वाजे या किवाड़ न थे। बरसात के मौसम में आंधी-वर्षा से बचने के लिए जंगली जानवर जब तब रात के वक़्त उसमें आश्रय लिया करते थे।

उस दिन शेरसिंह ने सूर्योदय के वक़्त शिथिलालय में पहुँचते ही एक अद्भुत देखा। जंगली देवता की मूर्ति के सामने एक बहुत ही बड़ा अजगर एक भेड़िये को अपनी लपेट में लिये हुए था। मगर उसका सिर भेड़िये के मुँह में फँस गया था। वे दोनों शायद एक दूसरे का वध करने या बचने के ख़्याल से खींचातानी कर रहे थे।

उस दृश्य को देख शेरसिंह भय कंपित हो उठा, वह उसी वक़्त भागने को हुआ,

पर पुनः हिम्मत बटोरकर जंगली देवता के सामने साष्टांग दण्डवत करके उठ खड़ा हुआ और बोला–"हे जंगली देवता! तुम्हारी महिमा बड़ी विचित्र है! एक हफ़्ते से हम जो कि तुम्हारे भक्त हैं, भूख से तड़प रहे हैं। हम तुम्हारे भक्त हैं। हम पर तुम्हारी कृपा नहीं है। मुझे यह अद्भुत दिखाकर हमें तुम क्या आदेश दे रहे हो?"

इसके थोड़े क्षण बाद उजड़ी दीवार के पत्थरों में से एक जंगली बिलाव अपना सर निकालकर जोर से चिल्ला उठा– "म्याव! म्याव!"

"यह तो एक और अद्भुत है! इसके गूढ़ार्थ बूढ़ा पुजारी गणाचारी ही बता सकता है!" यों कहते शेरसिंह अपनी जाति के लोगों को पुकारते उनकी तरफ़ दौड़े-दौड़े आ पहुँचा।

उस वक़्त नरभक्षी–औरत–मर्द, बूढ़े-बच्चे सब जंगल के एक छोटे से मैदान में बैठकर अपनी भूख मिटाने के लिए कंद-मूल व फल खाने के संबंध में चर्चा करते झगड़ने को तैयार हो रहे थे।

शेरसिंह शिथिलालय से हांफते आया और चिल्ला उठा–"जंगली देवता ने हम पर कृपा की है। गणाचारी हमारा पुजारी कहाँ पर है?"
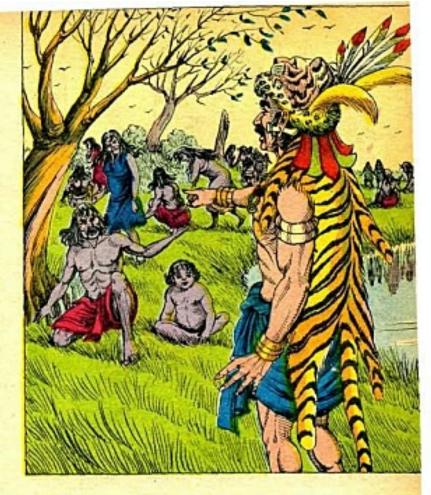
सभी नर भक्षियों ने एक साथ अपने सरदार की ओर देखा। उसके शब्दों में उन्हें हिरणों के झुंड और जंगली सुअरों के रेवड़ दिखाई दिये। उनमें से नरभक्षी जाति के थोड़े से जवान उछल पड़े और पूछा–"सरदारजी! क्या जंगली देवता के मंदिर में हिरण और सुअर तो नहीं पहुँच गये हैं? क्या हम भाले और तलवार लेते आवे? शायद हमारे देवता ने हमारे आहार के वास्ते इन जानवरों को यहाँ पर भेजा हो?"

शेरसिंह ने एक बार चारों तरफ़ नज़र दौड़ाई, गणाचारी को न पाकर खीझ उठा और बोला–"अरे कमबख़्तो! मैंने क्या

पूछा था और तुम लोग क्या जवाब दे रहे हो? बूढ़ा गणाचारी कहाँ पर है? जंगली देवता के मंदिर में मैंने जो दृश्य देखा, उसका कोई गूढ़ार्थ है। उसका रहस्य खोलनेवाला व्यक्ति अकेला गणाचारी ही है। उसे जल्दी बुला लाओ।"

गणाचारी दूर पर एक पेड़ की छाया में बैठकर भूख के मारे परेशान हो ऊँघ रहा था। लड़कों से जब शेरसिंह को यह खबर मिली, तब वह गणाचारी के निकट पहुँचा। मंदिर का वृत्तांत सुनाकर बोला—"गणाचारी! उस दृश्य का क्या रहस्य है? क्या यह अर्थ तो नहीं कि देवता ने हम पर बड़ी कृपा की है और हमें शीघ्र ही पर्याप्त मात्रा में जानवरों का माँस मिलनेवाला है?"

गणाचारी ने इन बातों पर कोई ध्यान न दिया, ऊँघते हुए बोला—"हमारी जाति के पुजारी के रूप में मेरे बाल सफ़ेद हो गये हैं। जंगली देवता कोई भी बात साफ़ नहीं बतला देते। सबके सब रहस्यमय होती हैं। मुझे तो ऐसा महसूस होता है कि हमारी जाति के लोगों को भी अन्य जंगली जातियों की भांति उन्हें जब जो मिला उसे खाने की आदत डालना ज़्यादा उचित होगा।"

बूढ़े गणाचारी की ये बातें पूरी भी न हो पाई थीं कि शेरसिंह बगल में खड़े एक जवान के हाथ से लाठी खींचकर ललकारते हुए बोला—"अरे दुष्ट! क्या तुम यह बात भूल गये हो कि हमारी जाति को माँस को छोडकर अन्य पदार्थों का स्पर्श तक नहीं करना चाहिए!" इन शब्दों के साथ शेरसिंह ने गणाचारी की पीठ पर लाठी से दे मारा।

चोट खाकर गणाचारी उठ खड़ा हुआ, केश झाड़ते हुए चिल्ला उठा—"हे मेरे जंगली देवता!" तब सरदार से पूछा—"अबे शेरसिंह! अब तुम साफ़-साफ़ बतला दो, आखिर बात क्या है? तुम्हारे वार से मेरी भूख जाती रही और मेरे बदन में

उल्लास बढ़ता जा रहा है।" ये शब्द कहते गणाचारी ने उछल कर पेड़ की डाल पकड़ ली और बन्दर की तरह झूलने लगा।

शेरसिंह का आदेश पाकर दो-तीन नर भक्षी युवकों ने गणाचारी के पैर पकड़कर खींच लिया और जब वह नीचे गिरने को था, तब उसकी कमर थामकर उसे सीधे खड़ा किया। तब शेरसिंह ने बूढ़े गणाचारी को मंदिर का सारा वृत्तांत सविस्तार दुबारा सुनाया।

इस बार गणाचारी ने सारी बातें सावधानी से सुन लीं, सिर उठाकर थोड़ी देर तक आकाश की ओर ताकता रहा, तब झट से झुककर थोड़ी-सी मिट्टी हाथ में ली, मंत्र पढ़कर सब लोगों पर छिड़क दिया, तब बोला—"यहाँ पर खाली मैदान में आग सुलगाकर कूंडे में पानी गरम करो। इस बीच कुछ लोग जाकर जंगली देवता के मंदिर में रहनेवाले अजगर, भेडिये तथा जंगली बिलाव को यहाँ पर लेते आओ।"

"मैं नहीं समझता कि जंगली बिलाव अभी तक पत्थरों के बीच बैठा हम लोगों का इंतजार करता रहेगा। अजगर और भेडिये ने अब तक एक दूसरे को मार डाला होगा। फिर भी मैं उन्हें अभी मँगवा लेता हूँ।" शेरसिंह बोला।
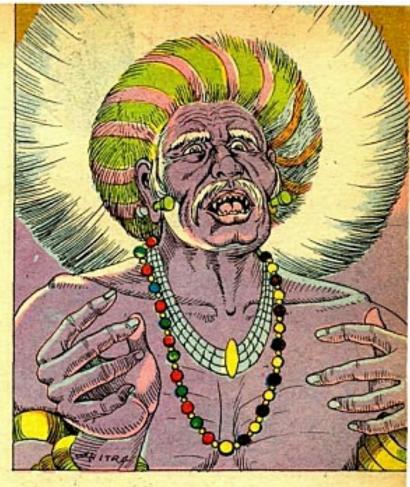
"जंगली बिलाव अगर हाथ न लगा तो वह जिस पत्थर पर बैठकर म्याव-म्याव चिल्ला रहा था, कम से कम उस पत्थर को लाना होगा! उसे भी उबलनेवाले पानी के कूंडे में डालना होगा!" बूढ़ा गणाचारी आँखें दिखाते हुए बोला।

"जंगली देवता ने अपने मंदिर में अजगर और भेडियेवाले अद्भुत को क्यों दिखाया? क्या हमें शीघ्र शिकार खेलने के लिए जंगल में जानवर मिल जायेंगे?" शेरसिंह ने डरते हुए पूछा।

यह सवाल सुनकर गणाचारी उछल पड़ा। अपने बाल नोचते, ऊँघते हुए चिल्ला उठा—"मैं कौन हूँ? जंगली

ने रथ को इधर-उधर खींचकर उलटा दिया। सिर्फ़ अंगरक्षक रथ का एक लक्खड़ पकड़कर नीचे गिरने से बच गया, लेकिन रथ का सारथी, राजा कनकाक्ष की पुत्री कांचनमाला और माया सरोवरेश्वर एक ही धक्के में ऊपर से पलटे खाते नीचे की ओर आने लगे।

उस वक़्त हवा के झोंके खाकर तीनों अलग-अलग दूर जा गिरे। केश बिखेरे उछलनेवाले बूढ़े गणाचारी ने नीचे गिरनेवाले माया सरोवरेश्वर को देखा, उसने चिल्लाकर कहा—"ओह! भूख से तड़पनेवाली हमारी जाति पर जंगली देवता ने अनुग्रह किया है। लो, देखो! हमारे लिए आहारों के रूप में मानव को ही भेज रहे हैं! कूंड़े में पानी को जल्दी गरम करो। मानव, अजगर, भेड़िया तथा जंगली बिलाव—इतने सारे प्राणियों का माँस पहले जंगली देवता को नैवेद्य के रूप में चढ़ाना होगा। इसके बाद जंगल में हमें जानवरों का माँस भर पूर मिल जाएगा।"

नर भक्षी जाति के लोग सर उठाये आसमान की ओर देखते उत्साह में आकर तालियाँ बजाने लगे। हंसों के रथ से फिसलकर नीचे गिर जाना माया सरोवरेश्वर के लिए दुर्भाग्य की बात ज़रूर थी, पर

देवता हूँ! मेरी कृपा रही तो तुम लोगों को जानवरों का माँस ही नहीं, बल्कि मानवों का माँस भी मिल जाएगा। अब उठो, चलो।"

इसके बाद कुछ लोगों ने पेड़ों के बीच खाली प्रदेश में एक बहुत बड़ा गड्ढ़ा खोद डाला। उस पर पानी का बड़ा कूंडा रखा और आग सुलगाई। कुछ जवान उत्साह में आकर जो भी सूखी लकड़ी हाथ लगी, लाकर आग में झोंकते गये। थोड़ी देर में सफ़ेद धुआँ आसमान में उठने लगा।

उसी समय माया सरोवरेश्वर के हँसों के रथ पर गीधों ने हमला किया। हंसों

भाग्यवश वह सीधे नीचे आया और नर भक्षियों द्वारा पानी गरम करनेवाले कूंड़े में जा गिरा। उसने पानी में एक डुबकी लगाई, धीरे से चिल्लाकर ऊपर उठा, कूंड़े के किनारे पकड़कर चारों ओर नज़र दौड़ाई, मगर कूंड़े के चारों तरफ़ नर भक्षियों को देख वह घबरा गया।

बूढ़ा गणाचारी मुस्कुराते हुए उसके निकट पहुँचा और बोला–"जंगली देवता ने दुर्बल मानव को नहीं, माँसवाले मानव को प्रदान किया है। वह पुरस्कार भी हमारे श्रम को बचाने के लिए सी ि कूंड़े में पहुँचा दिया है।"

गणाचारी के ये शब्द सुनने पर माया सरोवरेश्वर को पता चला कि वह न केवल जंगली जाति के लोगों के हाथ फँस गया है, बल्कि माँस भक्षी लोगों के हाथ में पड़ गया है। अब उसे क्या करना होगा? मुझ जैसे यश प्राप्त व्यक्ति की यह दुर्गति? यों वह सोच ही रहा था कि कूंड़ों का जल धीरे-धीरे खौलता गया और उसका शरीर झुलसने लगा।

माया सरोवरेश्वर चिल्लाते कूंड़े से बाहर निकलने को हुआ, इस पर बूढ़ा गणाचारी एक जलती लकड़ी को लेकर उसकी ओर निशाना करके चिल्ला उठा– "अबे, जंगली देवता के द्वारा हमारे लिए

आहार के रूप में भेज गया मानव! कूंड़े के जल को गरम पाकर बाहर निकलने की तुमने कोशिश की, तो मैं तुम्हें कूंड़े के नीचे के अंगारों में भून डालूँगा। ख़बरदार!"

ये बातें सुनने पर माया सरोवरेश्वर को लगा कि उसकी मौत निश्चित है, फिर भी गरम पानी में गलकर मर जाना पीड़ा दायक है न? चाहे किसी भी उपाय से सही, कूंढ़े से बाहर निकलना है। सोचते-सोचते उसे एक उपाय सूझा। उसने ऐसा अभिनय किया, मानो गणाचारी को कोई रहस्य बता रहा हो, धीमे स्वर में बोला– "तुम जंगली देवता के गणाचारी हो न?

तब तो यह रहस्य तुम्हीं से बताना है। तुम्हारे देवता ने मेरे साथ आसमान से और तीन लोगों को तुम्हारे आहार के रूप में भेजा है।"

नरभक्षी जाति का पुजारी गणाचारी ने विस्मय में आकर पूछा–"तो फिर वे लोग कहाँ पर हैं?"

"लगता है कि वे लोग रास्ता भूलकर कहीं और उतर गये हैं। अगर तुम मुझे अपने साथ ले जाओगे तो मैं उन्हें खोज कर पकड़ा सकता हूँ।" माया सरोबरेश्वर बोला।

गणाचारी को ये बातें बिश्वसनीय प्रतीत हुई। उसने तत्काल खौलनेवाले पानी के कूंड़े में से माया सरोवरेश्वर को बाहर निकलवाया, एक को आदेश दिया कि यह वृत्तांत जंगली देवता के मंदिर में गये हुए शेरसिंह को सुना दे, तब चार लोगों को साथ ले माया सरोबरेश्वर के साथ जंगल की ओर चल पड़ा।

संध्या तक उन लोगों ने जंगल में कई प्रदेशों में ढूँढ़ा। अचानक एक पेड़ के नीचे रथ सारथी का चाबूक उन्हें दिखाई दिया।

"मेरे रथ सारथी, कांचनमाला बगैरह इस पेड़ की डालों में फँस गये होंगे। बेचारे न मालूम वे जीवित हैं या नहीं? उन्हें भी बचाना होगा।" यों सोचते माया सरोवरेश्वर ने सर उठाकर ऊपर देखा। उसे पेड़ की डालों में कोई दिखाई न दिया, पर ऊपर हँसों का रथ उड़ते दिखाई पड़ा।

उस समय ऊपर उठनेवाले धुएँ को पहचानकर सिद्ध साधक और मकरकेतु भी नर भक्षकों के प्रदेश की ओर बढ़ रहे थे। सिद्ध साधक अपने बाहन नर बानर को हांकते 'जय महाकाल की' चिल्ला उठा। यह चिल्लाहट सुनकर माया सरोवरेश्वर तथा उसके साथ रहनेवाले सभी लोग आपाद मस्तक कांप उठे। (और है)
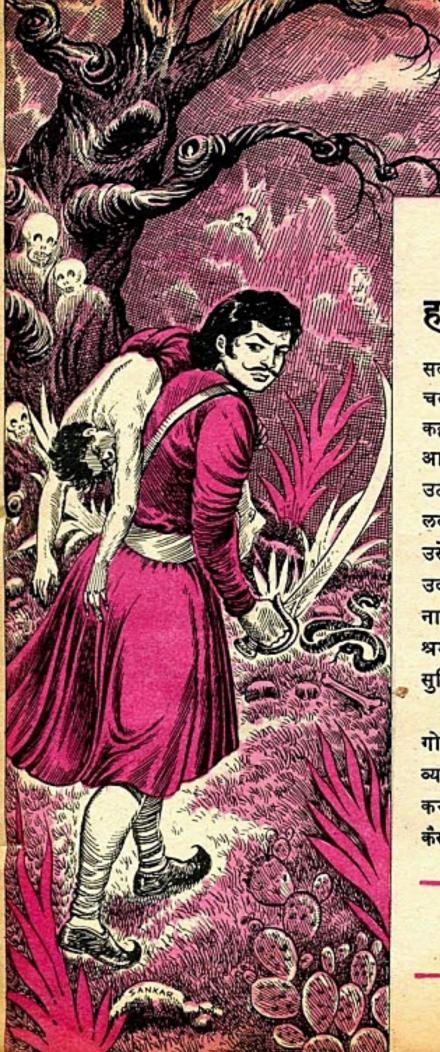
ऋण से मुक्ति

हठी विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आया, पेड़ से शव उतार कर कंधे पर डाल सदा की भांति चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा–"राजन, मैं नहीं जानता कि शायद आप जीवन से विरक्त हो इस प्रकार श्रम उठा रहे हैं। मगर विरक्त व्यक्ति के ललाट पर लिखी गई मृत्यु भी कभी-कभी उसे प्राप्त नहीं हो सकती है। इसके उदाहरण के रूप में मैं आप को गोपालक नामक व्यक्ति की कहानी सुनाता हूँ। श्रम को भुलाने के लिए आप यह कहानी सुनिये।

बेताल यों कहने लगा: महन्तीपुर में गोपालक नामक एक जन्मजात दरिद्र व्यक्ति भीख मांग कर अपने दिन काट लिया करता था। न मालूम उस की जन्मकुंडली कैसी थी, पर उसे एक जून खाना मयस्सर

बेताल कथाएं

होता तो तीन जून बराबर खाना न मिलता था।

एक दिन रामानन्द नामक एक ज्योतिषी अपने शिष्यों को साथ ले काशी जाते हुए महन्तीपुर में आ पहुँचा। उस गाँव के लोगों ने ज्योतिषी से यह जान लिया कि उनकी कठिनाइयां कब और कैसे दूर हो सकती हैं? यह बात मालूम होने पर गोपालक रामानन्द के यहाँ पहुँचा और उसने पूछा कि उसकी इस दरिद्रता का क्या कारण है? और उसे दूर करने का उपाय क्या है?

"बेटा! तुम्हारे ललाट में सुख भोगने का भाग्य नहीं लिखा गया है, इसलिए मेरा अनुमान है कि तुम्हारी दरिद्रता कभी दूर नहीं हो सकती।" रामनन्द ने गोपालक को समझाया।

"तब तो महात्मा, आप यह बताइये कि मेरी मृत्यु कब होगी और मैं इस संसार से कब विमुक्ति पा सकता हूँ?" गोपालक ने सवाल किया।

"बेटा, पड़ोसी नगर में रामगुप्त, सोमगुप्त और भीमगुप्त नामक तीन व्यापारी हैं। वे तीनों तुम्हें एक-एक सोने का सिक्का ऋणी बने हुए हैं। तुम उस ऋण को वसूल करके जब उसका अनुभव करोगे, तभी तुम्हें मृत्यु प्राप्त होगी।" रामानन्द ने बताया।

गोपालक ख़ुशी के साथ रामानंद से विदा लेकर निकट के शहर में गया और
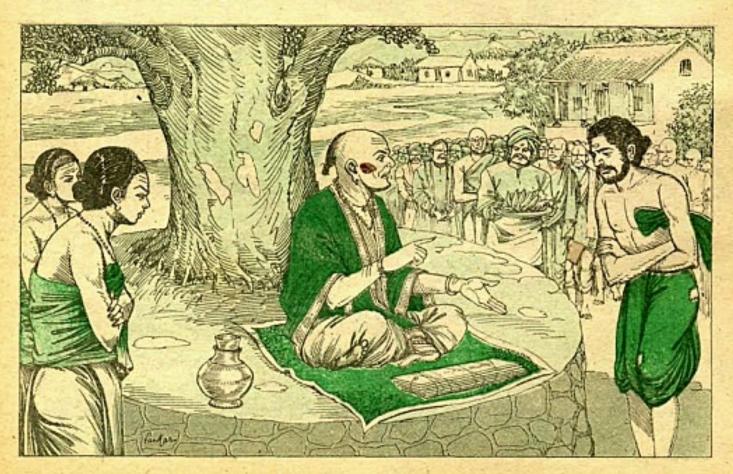
तीनों व्यापारियों से मिल कर प्रत्येक से एक-एक सोने का सिक्का देने को कहा। तीनों ने चुपचाप एक-एक सिक्का गोपालक को दे दिया।

गोपालक ने सोने के सिक्के ले जाकर गरीबों में अन्न दान किया और सोचा— "ओह! आज से मुझे इस संसार से विमुक्ति मिल जाएगी। किसी भी क्षण मुझे मौत आ सकती है। मेरे मरने के बाद मेरा यह शरीर जंगली जाननरों का आहार बन जाय तो अति उत्तम होगा।" यों सोचकर वह जंगल में निरुद्देश्य भटकने लगा।

इस प्रकार दो दिन बीत गये। गोपालक भूख के मारे तड़पने लगा, पर किसी बाघ या शेर ने उसे देखकर भी खाने का प्रयत्न नहीं किया। पर गोपालक की समझ में न आया कि ज्योतिषी की बात सच साबित क्यों नहीं हुई? इसी दुविधा में घूमते-घामते वह एक गड्ढे में गिर गया।

"ओह! भगवान ने शायद मेरे वास्ते यह गड्ढा पहले ही तैयार कर रखा है। अब मेरी मौत निश्चित है।" यों सोचते उसने चारों ओर अपनी दृष्टि डाली, अंधेरे में उसे कोई चीज़ चमकती दिखाई दी। गोपालक ने उस का स्पर्श करके जान लिया कि वह सोना है। गड्ढे में एक ओर सुरंग है जिसमें अपार सोना भरा हुआ है।
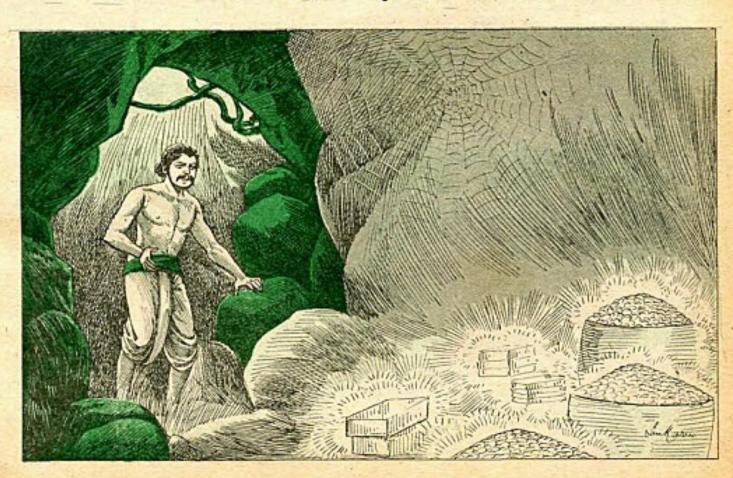
गोपालक ने सारा सोना इकट्ठा किया, अपने घर लौट कर उसकी मदद से गरीबों के दुखों को दूर करते उन की दृष्टि में देवता बन बैठा। गाँववालों की समझ में न आया कि जन्म जात दरिद्र गोपालक को एक साथ इतना सारा वैभव कहाँ से प्राप्त हुआ? और न उसने अपने निकट के लोगों से इसके बारे में कुछ कहा भी।

कुल मिला कर ज्योतिषी की बात सच न निकली, गोपालक बहुत समय तक ज़िंदा रहा। उसके पास अपार सोना था, फिर भी वह गरीबों में एक बनकर अपनी ज़िंदगी बसर करता था। इस कारण वह बहुत दिन तक गरीबों की सहायता कर सका।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर पूछा— "राजन, गोपालक की मृत्यु क्यों नहीं हुई? ज्योतिषी रामानन्द की बात बिलकुल असत्य हो जाने का क्या कारण है? इस संदेह का समाधान जानते हुए भी न देंगे तो आप का सिर टुकड़े-टुकड़े हो जाएगा।"

इस पर विक्रमार्क ने यों उत्तर दिया— "रामानन्द की बात झूठ साबित नहीं हुई। क्योंकि गोपालक ने व्यापारियों से अपना जो ऋण वसूल किया, उसे अपने स्वार्थ के हेतु उपयोग न करके दान दिया और अपने ऋण को दूसरों में बांट दिया। अगर वह उन तीनों सिक्कों को अपने सुख के वास्ते उपयोग करता तो शायद उसकी मौत हो जाती। मगर उसके भीतर दान देने की जो प्रवृत्ति थी, उसने वैसा करने नहीं दिया। अंत में भी उसने यही सोचा कि वह मर जाएगा तो उस का शरीर केवल राख बन जाने के बदले किसी जानवर का आहार बन जाय। इस कारण उसे और अधिक सोना प्राप्त हुआ। साथ ही उसके ऋणियों की संख्या भी बहुत बढ़ गई।"

इस प्रकार राजा के मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

बलवान शत्रु
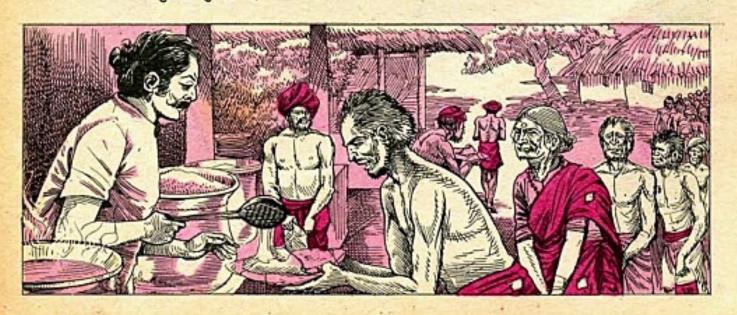
उन्नाव नामक एक बस्ती में गौरी नामक एक झगड़ालू औरत थी। वह बड़ी बातूनी थी। लेकिन वह अपने बेटे रामदास को दिल से प्यार करती थी। रामदास को उसने बड़े लाड़-प्यार से पाला-पोसा, बड़ा किया। मगर गौरी झगड़ालू औरत थी, इस कारण कोई भी रामदास को अपनी लड़की देने को तैयार न हुआ।

एक बार रामदास किसी काम से दूर के एक गाँव में गया। उस गाँव के तालाब के पास उसने एक सुंदर युवती को देखा और उस पर मोहित हुआ। फिर क्या था, उसके पीछे युवती के घर पहुँचा। युवती को भी रामदास पसंद आया।

रामदास को पता चला कि उस युवती का नाम इंदिरा है। रामदास ने इंदिरा के माता-पिता से बताया कि वह उसके साथ शादी करना चाहता है।

इंदिरा के माँ-बाप ने रामदास को समझाया—"बेटा, हमारी लड़की बड़ी झगड़ालू है। इसीलिए उसका रिश्ता क़ायम नहीं हो पा रहा है। अगर तुम्हें पसंद हो तो तुम इसके साथ शादी कर सकते हो।"

रामदास ने अपनी माँ के बारे में सारी बातें बता दीं। उन लोगों ने सोचा कि ऐसी सास के मिलने पर इन्दिरा सुधर जाएगी और रामदास के साथ इंदिरा की शादी कर दी।

अपनी पत्नी को साथ ले घर लौटे रामदास को देख गौरी पहले अचरज में आ गयी। मगर यह सोचकर वह ख़ुश हुई कि आख़िर किसी ने उसके लड़के को अपनी लड़की ब्याह दी है। एक महीने तक गौरी ने अपने बेटे और बहू को आराम से रखा। इसके बाद उसे जब पता चला कि उसकी चाकरी से बहू सुख

राजनाथ शर्मा
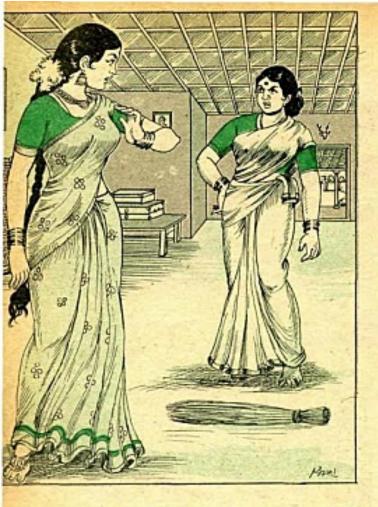
पा रही है, धीरे-धीरे उसे भी छोटे-मोटे काम सौंपने लगी। इंदिरा भी अपनी सास जो भी काम सौंपती, चुपचाप कर देती थी। इस तरह एक महीना और बीत गया।

इस बीच सास का अपनी नयी बहू के प्रति आकर्षण जाता रहा। वह इंदिरा के हर काम में ऐब ढूंढने लगी। बहू ने भी हर बात का मुँह-तोड़ जवाब देना शुरू किया। दोनों के बीच वैर बढ़ता गया।

एक दिन रामदास ने खेत से घर लौटकर देखा, रसोई बनी न थी। सास ने बहू पर, बहू ने सास पर दर्जनों आरोप लगाये। रामदास दोनों को डांटने लगा, माँ ने आक्षेप किया कि रामदास के लिए पत्नी प्यारी हो गई है। इंदिरा ने इलज़ाम लगाया कि उसका पति बच्चे की तरह अपनी माँ का आंचल पकड़कर घूमता है, ऐसी हालत में उसने शादी ही क्यों की?

उस दिन से रामदास को अपना घर नरक जैसा मालूम होने लगा। वैसे वह स्वभाव से दब्बू था। इस पर दोनों बराबर उसे ताने देने लगीं, फिर भी वह चुपचाप सहता गया।

एक बार रामदास ने अपनी जमीन के मालिक के लड़के को साँप से बचाया। मालिक उस पर खुश हुआ और अपनी दुधारू मवेशियों में से एक को हांक ले जाने को कहा। रामदास ने यह बात बड़े ही उत्साह के साथ अपने घर में बताई।

गौरी ने कहा—"गोमाता को घर लाना मंगलदायक है।"

"नहीं, हम भैंस लेंगे, गाढ़ा दूध देगी।" इंदिरा ने कहा। बात बढ़ती गई और झगड़े का रूप धारण किया। रामदास ने सोचा कि शायद झगड़ा खतम हो जाय, तब दोनों को समझाये। पर ऐसा न हुआ।

दूसरे दिन मालिक ने रामदास से पूछा—"तुम गाय क्यों न ले गये?" रामदास ने अपनी कठिनाई बताई।

"मैंने अपनी सारी भैंसों को हाट में भेज दिया है। सिर्फ़ गायें रह गई हैं, एक गाय ले जाओ।" मालिक ने समझाया।

अपनी समस्या के इस प्रकार हल होने पर रामदास खुश हुआ और यह बात घर में बताई। गौरी ने खुश होकर कहा- "हमारे घर भैंस के आने से भगवान ने ही बचाया है।"

"भैंस को लाने का भाग्य सब को थोड़े ही होता है?" इंदिर ने झट ताना दिया, इस पर दोनों लड़ पड़ीं।

रामदास ने सोचा कि अब यह लड़ाई खतम होने की नहीं है। वह बोला-"मैं अभी जाकर गाय को हांक लाता हूँ।"

"गाय को ही लाना हो तो काली गाय को ले आओ। कम से कम भैंस के रंग को देख खुश हो सकते हैं।" इंदिरा ने समझाया।

"सुनो बेटा! हम मंगलदायक समझकर दुधारू गाय को ले आ रहे हैं, पर यह काला रंग कैसा? सफ़ेद गाय को ले आओ।" गौरी ने कहा।

इस बात को लेकर फिर सास-बहू के बीच वाद-विवाद छिड़ गया।

"तुम काले रंग की निंदा करती हो, क्या तुम काली नहीं हो?" इंदिरा ने अपनी सास से पूछा।
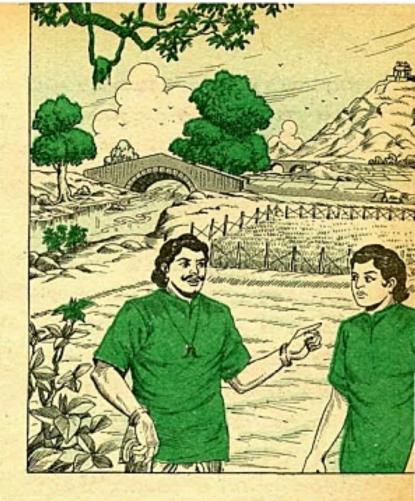
"तुम सफ़ेद रंग की निंदा करती हो! क्या तुम सफ़ेद नहीं हो?" इंदिरा से सास ने पूछा।

"मैं सफ़ेद रंग की होती तो चुप रह जाती, मेरा रंग पीला है।" इंदिरा बोली।

रामदास ने सोचा कि इनका झगड़ा अभी खतम होनेवाला नहीं है। वह खुद खाना परोसकर खा गया और लेटकर सो गया।

मालिक ने दूसरे दिन रामदास को फिर याद दिलाया कि तुम गाय ले जाने क्यों न आये? रामदास ने अपनी तक़लीफ़ बताई।

"सुनो, मेरे घर में सास-बहू का झगड़ा तो नहीं है। पर मेरे दो पत्नियाँ हैं। वे भी पहले इसी तरह झगड़ा किया करती

थीं। आखिर मैंने एक युक्ति करके उनमें दोस्ती कराई।" मालिक ने कहा।

"मालिक! वह युक्ति मुझे भी तो बताइये।" रामदास ने पूछा।

"दो शत्रुओं को अगर एक होना है तो, उनसे भी एक बलवान शत्रु की ज़रूरत होती है।" मालिक बोला।

"मैं ऐसे बलवान शत्रु को कहाँ ढूंढ लाऊ, मालिक?" रामदास ने पूछा।

"वह शत्रु तुम्हीं हो।" मालिक ने हँसते हुए कहा।

रामदास ने भांप लिया कि उसे क्या करना होगा। उस दिन शाम को वह मालिक के घर से लाल गाय हांककर ले गया। सास-बहू लाल गाय को देख रामदास पर टूट पड़ीं।

"तुम अब ज्यादा दिन थोड़े ही जीनेवाली हो, माँ! छोटों को शाप क्यों देती हो? कुछ तो अक़्ल होनी चाहिए।" रामदास ने गुस्से में आकर माँ को डांट बताई।

इंदिरा ने सोचा कि अब रामदास उसका पक्ष लेगा। इसलिए वह और जोर-शोर से चिल्लाने लगी।

"तुम अपना काम देख लो। मर्दों के काम में दखल न दो। मालिक ने गाय ले जाने को कहा और मैं अपनी पसंद की गाय हांक लाया। इस संबंध में तुमने जीभ चलाई तो मैं उसी तरह तुम्हें पीटूंगा, जैसे पशु को पीटा जाता है, समझी!" रामदास ने अपनी पत्नी को खरीखोटी सुनाई।

इस तरह वह दो दिन बराबर अपनी माँ को डांटता रहा, अपनी पत्नी को सचमुच ही पीटा, फिर क्या था, वे दोनों औरतें एक हो गईं। वे रामदास से डरने लगीं। जब तक वह घर पर रहता, तब तक वे दोनों भीगी बिल्लियाँ बनकर रह जातीं, वह ज्यों ही बाहर निकल जाता, त्यों ही वे दोनों रामदास की शिकायत करतीं। इस तरह उन दोनों के बीच घनिष्टता पैदा हुई।
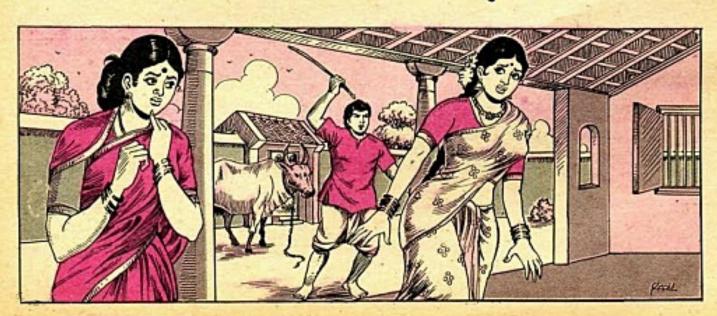
भीतरी रहस्य

बहुत दिन बाद जब वीरनारायण किसी काम से अपने गाँव आया तब उसके दिली दोस्त भूपति और रंगनाथ ने अपने-अपने घर टिकने का अनुरोध किया। वीर नारायण ने दोनों के घरों में दो-दो दिन बिताने को मान लिया।

पहले दो दिन वीरनारायण भूपति के घर टिका रहा। भूपति और उसकी पत्नी ने उसका बढ़िया सत्कार किया। लेकिन न मालूम क्यों, भूपति जहाँ भी जाता, वीरनारायण को भी साथ ले जाता रहा। इसके बाद जब वह पड़ोस में स्थित रंगनाथ के घर गया, तब रंगनाथ भी दिन-भर वीरनारायण को अपने साथ लेकर घुमाता रहा।

इस रहस्य का पता लगाने के ख़्याल से कोई बहाना बनाकर वीरनारायण रंगनाथ को कहीं छोड़ उसके घर लौट आया, उसने देखा कि पिछवाड़े में उसके मित्रों की पत्नियाँ सर पर आसमान को लेकर चिल्ला-चिल्लाकर लड़ रही हैं। यह बात वीर-नारायण ने जब अपने मित्रों को बताई, तब उन दोनों ने लज्जा के मारे सर झुका लिये।

इस पर वीरनारायण ने अपने मित्रों को एक बढ़िया सलाह दी—"तुम दोनों नौकरानियों को हटाकर अपनी अपनी पत्नियों को इस तरह काम सौंप दो जिस से उन्हें दम लेने की फ़ुरसत तक न मिले। इससे उन्हें लड़ने तक की फ़ुरसत न मिलेगी। तब वे ही बदल जायेंगी।" वाकई यह सलाह अच्छा कारगार सिद्ध हुई।

अपात्र दान
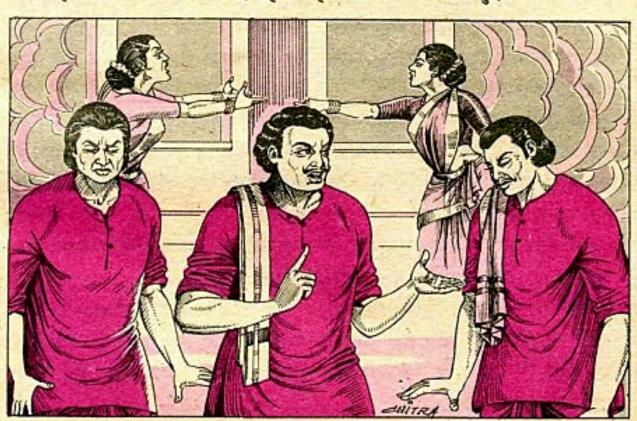
एक गाँव में गंगाराम और दुर्गादास नामक दो गल्ले के व्यापारी थे। वे दोनों व्यापार में साझेदार थे। कई सालों से वे बिना मतभेद के व्यापार करते देख जब भी उस गाँव में भाइयों के बीच कोई झगड़ा होता तो गाँव के बुजुर्ग लोग उनकी मैत्री का उदारण लेकर कहा करते थे–"अरे, तुम लोग गंगाराम और दुर्गादास को देख सबक़ क्यों नहीं सीखते।"

वे दोनों मित्र हर साल संक्रांति के दिन अपने लाभ बांट लेते थे। उस वक़्त गंगादास अपने हिस्से के लाभ में से तीन सौ पैंसठ रुपये अलग निकाल कर एक पोटली बांध लेता था। मगर दुर्गादास ने कभी उससे यह नहीं पूछा–"भाई, तुम ये रुपये इस तरह पोटली बांध कर क्यों रखते हो? इसके माने क्या है? मुझसे क्यों नहीं बताते?" इस पर गंगाराम को भी खुद आश्चर्य होता था कि दुर्गादास क्यों कर नहीं पूछता।

हर साल उस गाँव की सीमा पर हाट-मेला लगता था। उस वक़्त हाट के साथ जुआ और दारू पीना भी खूब चलता था। हाट के प्रदेश से थोड़ी दूर पर एक टीला था। उस टीले पर एक कुआँ था, जिसके चारों तरफ़ ऊँचे व लंबे पेड़ थे। वह स्थान मुसाफ़िरों को आराम करने व खाने के लिए ज्यादा अनुकूल था। तीन सौ पैंसठ रुपये की पोटली हर साल सब की आँख बचा कर गंगाराम उस कुएँ के पास छोड़ कर चला जाता था: लेकिन वह यह नहीं जानता था कि वे रुपये कौन उठा कर ले जाता है।

मगर एक साल गंगाराम ने सोचा कि पता लगा ले कि यह गुप्त दान किसके हाथ लगता है। गंगाराम कुएँ के पास से

प्रियरंजन गुप्त

निकल गया, फिर लौट कर उसी जगह आ पहुँचा। उसने देखा कि कोई अपने सर पर तौलिया डाले पेड़ों की ओट में से चला जा रहा है। गंगाराम ने रुपयों की पोटली कुएँ के पास जो रखी थी, वह गायब थी।

गंगाराम यह सोचकर उस नक़ाबधारी का पीछा करने लगा कि वही रुपयों की पोटली उठा ले जा रहा है। उसे आखिर पता चला कि वह व्यक्ति और कोई नहीं, बल्कि दुर्गादास ही है।

"दोस्त! मैंने सोचा था कि मेरे रुपये किसी गरीब के हाथ लगे और उसका लाभ उठाये, पर वे रुपये तुम्हारे हाथ लग गये?" गंगाराय ने पूछा।

दुर्गादास ने मुस्कुराते हुए पूछा—"मित्र, जब तुमने ये रुपये फेंक दिये, तब ये रुपये चाहे किसीके भी हाथ लगे, इससे तुम्हारा क्या मतलब है?"

"अगर तुम को मालूम हो जाय कि मैं क्यों ये रुपये स्वयं फेंक रहा हूँ, यह बात शायद न कहते।" इन शब्दों के साथ गंगाराम ने अपनी कहानी सुनाई:

"बचपन में ही मेरे माँ-बाप मर गये। मैं गरीब था, अपना पेट भरने के लिए मुझे छोटी उम्र में ही तरह-तरह के काम करने पड़े। एक बार अकाल पड़ने के कारण मेरे गाँव के लोग चारों तरफ़ भाग गये। मैं उस वक़्त इस गाँव में आया। यहाँ पर एक बड़ी हाट लगी थी और
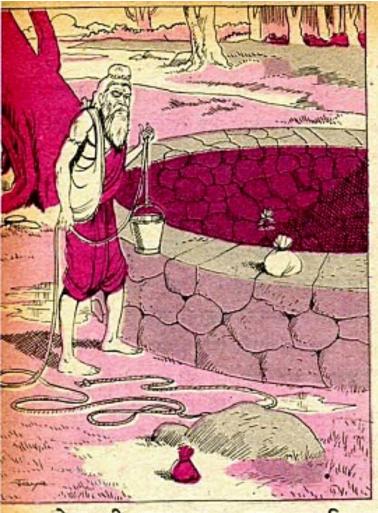
मेला भी लगा था। सुना था कि वह संक्रांति का दिन है। मैं चार दिनों से भूखा था। याचना से काम न चला। एक मिठाई की दूकान में लड्डू चुरा कर पकड़ा गया और मार खाया। भूख की पीड़ा और असहायता की वजह से मर जाने की मेरी इच्छा हुई। मैं इसी कुएँ में कूदने आया। कुएँ में कूदने ही जा रहा था कि मेरे पैर में कोई चीज़ लग गई। वह लाल पत्थर जड़ी सोने की अंगूठी थी। बस! मेरे मन में ज़िंदगी के प्रति फिर आशा जगी। उस अंगठी को बेच कर मैंने एक दुधारू भैंस खरीद ली। उस से जो आमदनी हुई, मैंने एक बैल गाड़ी खरीदी। इसके बाद तुमसे मेरी दोस्ती हुई। गल्ले के व्यापार में दोनों को लाभ हुआ। इसलिए जिस दिन मुझे कुएँ के पास सोने की अंगूठी मिली, उसी संक्रांति के दिन मैं कुएँ के पास तीन सौ पैंसठ रुपये गुप्त रूप से छोड़ता आ रहा हूँ।"

ये सारी बातें सुन दुर्गादास ने कहा– "हो सकता है कि तुम्हारा विचार बड़ा ही अच्छा हो। मगर तुम्हारे रुपये जिसके हाथ लगते हैं, उसकी बुद्धि के कुमार्ग पर जाने की गुंजाइश भी है। चाहे तो हम प्रत्यक्ष रूप से देख सकते हैं।" तब गंगाराम को साथ ले कुएँ के पास लौट आया और दोनों एक पेड़ पर जा बैठे।

दुर्गादास ने एक छोटी थैली निकाल कर कुएँ के निकट फेंका। थोड़ी देर बाद उधर से गेरुए वस्त्र धारण किये हुए सफ़ेद दाढ़ीवाला एक साधू आ निकला। उसने खाने की पोटली कुएँ के जगत पर रख दी, हाथ-मुँह धोने के लिए पानी खींचने के ख्याल से बाल्टी उठाई, तभी उसकी दृष्टि दुर्गादास के द्वारा फेंकी गई थैली पर पड़ी।

दूसरे ही क्षण साधू के भीतर एक विचित्र परिवर्तन हुआ। अपने कीर्तन बंद कर उसने चारों तरफ़ नज़र दौड़ा कर देखा कि कहीं कोई उसे देख तो नहीं रहा है। तब उस थैली को अपने झोले में डाल

लिया, वह स्वगत में कहने लगा—"इतने समय बाद इस कमबख्त ज़िंदगी से मुक्ति मिल गई है। अब शादी करके सुख भोगूंगा।" यों कहते खाने की बात तक भूलकर वह साधू वहाँ से चला गया।

गंगाराम के मुँह से निकल पड़ा—"समस्त को त्यागनेवाले साधू इस उम्र में शादी करना चाहते हैं?"

दुर्गादास ने गंगाराम को मौन रहने का संकेत किया। एक चांदी का रुपया निकाल कर कुएँ के जगत पर फेंक दिया।

थोड़ी देर बाद दो जुआख़ोर परस्पर निंदा करते हुए कुएँ के पास पहुँचे।

"अबे, दुधारू भैंस को ख़रीदने के लिए मैं जो रुपये लाया, तुम्हारी बातों में आकर वे रुपये जुएँ में खो बैठा। हाथ में एक कौड़ी तक न बची। मैं कौन-सा मुंह लेकर अपने घर जा सकता हूँ? इससे अच्छा यह होगा कि मैं इस कुएँ में कूद कर अपनी जान दे दूं।" यों कहते एक आदमी कुएँ की ओर भागा। दूसरा आदमी उसे रोकने के प्रयत्न में था, तभी पहले आदमी को एक रुपये का सिक्का दिखाई दिया। झट उसे अपने हाथ में लेकर बोला—"अच्छे मौक़े पर यह रुपया हाथ लगा। शायद इस रुपये से मेरे खोये हुए सारे रुपये मिल जाय। क्या पता?" ये शब्द कहते वह जुआखाने की ओर दौड़ पड़ा।

"इसमें मेरा भी आधा हिस्सा है।" दूसरा आदमी चिल्लाते हुए उसके पीछे
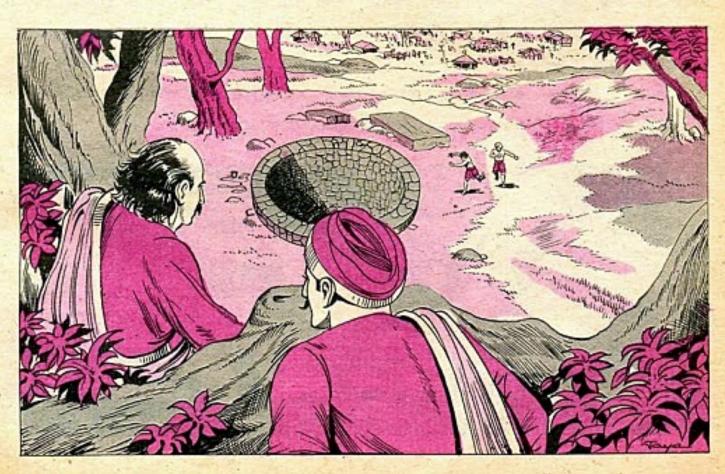
हो लिया। गंगाराम ने दुर्गादास से कहा–"दोस्त, यह क्या है? यह जुएँ मे सारे रुपये खोकर रो रहा था, पर एक रुपये के हाथ लगते ही फिर जुआ खेलने भाग गया।"

दुर्गादास मौन रहा।

इसके थोड़ी देर बाद एक लकड़हारा लकड़ी का गट्ठर पीठ पर लादे कुएँ की ओर आया। दुर्गादास ने रुपयों की छोटी-सी थैली निकाल कर लकड़हारे तथा कुएँ के बीच फेंक दिया।

लकड़हारा यह कहते आगे बढ़ा–"मैं ये लकड़ियाँ कब बेचूँगा और कब घर पहुँच कर कांजी बनाऊँगा।" उसने बाल्टी से पानी खींचा; भर पेट पानी पीकर हाट की ओर चला गया।

"अरे, यह क्या? रास्ते में रुपयों की थैली पड़ी देख उस ओर ध्यान दिये बिना यह आदमी चला जा रहा है!" गंगाराम ने अचरज में आकर कहा।

"देखा! तुम्हारा गुप्त दान अपात्र व्यक्तियों के हाथों में पड़कर कैसी हानि पहुँचा रहा है। बिना श्रम किये अनायास प्राप्त होनेवाले धन का मूल्य जाननेवाले लोग बहुत ही कम हैं। अधेड़ उम्र के साधू का मन भी धन को देखते ही बदल गया। उसने यह भी नहीं देखा कि उस पोटली में टीकरे भरे हैं, पर सुखों के प्रति अपने मन को केन्द्रित किया। इस प्रकार रुपये को देखते ही जुआखोर के मन में जो ज्ञानोदय हुआ, वह जाता रहा। वास्तव में धन के द्वारा जो सुधर जाता है, वह अनायास मिलनेवाले धन की परवाह नहीं करता। लकड़हारा अपने श्रम के फल पर ही आशा लगाये बैठा है।" दुर्गादास ने समझाया।

"तब तो मैंने आज तक जो गुप्त दान किया, वह क्या इसी प्रकार मिट्टी में मिल गया है?" गंगाराम ने पूछा।

"नहीं, वह सारा धन मैंने सुरक्षित रखा है। उस धन से हम हमारे नाम पर एक पाठशाला का भवन बनायेंगे।" दुर्गादास ने समझाया।

चोर और साधू

गोविंद अपने कुत्ते को साथ ले रामापुर से निकल कर जब गंगापुर पहुँचा, तब तक अंधेरा फैल चुका था। भूख के साथ उसे बड़ी प्यास भी लगी थी। तब तक सारी गलियाँ निर्जन हो चुकी थीं। प्यास बुझाने के ख्याल से उसने एक मकान के सामने पहुँचकर दर्वाजा खटखटाया। फिर क्या था, एक साथ भीतर से सुनाई देनेवाली बातें अचानक बंद हो गईं।

गोविंद अचरज में आ गया। उसने दूसरे मकान के निकट पहुँच कर दस्तक दिये बिना किवाड़ों के छेद में से भीतर झांका। भीतर धुंधली रोशनी में कंठ तक ढककर आमने-सामने बैठकर कुछ लोग बात कर रहे थे।

"भाई, मुझे प्यास लगी है। पीने को थोड़ा पानी दीजिए।" गोविंद ने दीन स्वर में पूछा। दूसरे ही क्षण भीतर के लोग दुपट्टे ओढ़ कर पैर लंबा करके चुपचाप लेट गये। उस निराशा की हालत में भी गोविंद अपनी हँसी को रोक न पाया।

गोविंद ने समझ लिया कि इतनी जल्दी किवाड़ बंद कर गाँववाले लेट गये हैं तो इसका कारण होगा कि गाँववाले किसी बात को लेकर डर रहे हैं। इसके बाद गोविंद गाँव की निर्जन गलियों से चलते मंदिर में पहुँचा।

उसने देखा कि मंदिर के मण्डप में तीन लोग बैठे हुए बातचीत कर रहे हैं। उसे संदेह हुआ, फिर भी निर्भय गोविंद उनके निकट पहुँचा, पर उन्हें देख गोविंद का कुत्ता भूंक उठा।

उनमें से एक गांजा पी रहा था। बाक़ी दोनों मांस चखते दारू पी रहे थे। गांजा पीनेवाले ने गोविंद को देख पूछा—"अबे, तुम कौन हो?"

आलोक वर्मा
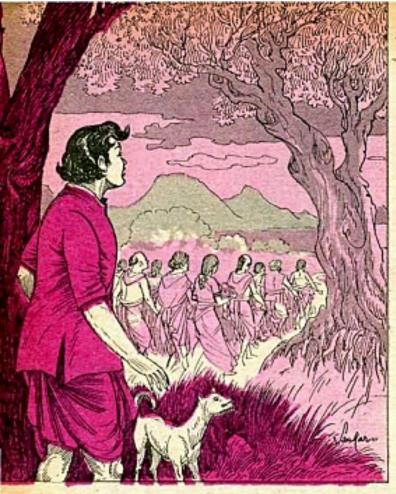
"मुझे बड़ी प्यास लगी है, पहले पीने को पानी दिलाइये। इसके बाद मैं आराम से सारी बातें बताऊँगा।" गोविंद ने जवाब दिया।

"अबे, हम नहीं जानते कि पानी कैसा होता है? हम दारू को छोड़ दूसरी चीज़ पीना नहीं जानते। मगर प्यासे को पीने के लिए कुछ देना हमारा कर्तव्य है, लो बोतल; अपना गला थोड़ा तर कर लो। तब तुम्हें मालूम हो जायगा कि यह क्या चीज़ है?" दूसरे ने कहा।

गोविंद कोई जवाब दिये बिना वहाँ से चला गया और उस रात को कहीं जाकर सो गया।

दूसरे दिन उसने नींद से जाग कर देखा, सारे गाँव में कोलाहल मचा हुआ है। लोग भीड़ बांधकर बड़े उत्साह के साथ कहीं चले जा रहे हैं। गोविंद ने उन लोगों से पूछकर इसका असली कारण जान लिया।

वह शुक्रवार का दिन था। उस दिन साधू महाराज लोगों को दर्शन देते हैं। चार हफ़्ते पहले वह उस गाँव में आया था। वह साधारण योगी न था। सप्त लोकों का संचार करनेवाला योगी था, त्रिकालवेदी भी था। वह गाँव के बाहर बरगद के नीचे ठहरा हुआ था। शुक्रवार को छोड़ बाक़ी दिनों में वह योग समाधि में रहता है। शुक्रवार के दिन लोग उसका चरण रज लेकर अपनी इच्छाएँ उसके सामचे प्रकट करते हैं। उनकी इच्छाओं की पूर्ति कब और कैसे होती हैं, यह बात योगी देवताओं से परामर्श करके बताता है।

ये सारी बातें गोविंद को अविश्वसनीय मालूम हुईं। उसने लोगों से पूछा—"यह बात तो सही है, पर मुझे कृपया यह बताइये कि आख़िर इस गाँव के लोग संध्या के होते ही किवाड़ क्यों बंद कर लेते हैं?"

लोगों ने गोविंद को बताया—इस गाँव में चोरों का दबदबा है। चोर राक्षसों से भी

ज्यादा क्रूर हैं। वे बिना कारण लोगों को मार डालते हैं। स्वामीजी प्रयत्न करके भी कुछ नहीं कर पा रहे हैं, क्योंकि वे लोग रावण की जाति के हैं। इसलिए देवताओं ने स्वयं स्वामीजी से बताया है कि उनसे दुश्मनी मोल लेना एक दम मौत को निमंत्रण देने के बराबर है। इन चोरों की बात को लेकर स्वामीजी तथा देवताओं के बीच बराबर बड़ा संघर्ष हो रहा है, आदि।

शुक्रवार के दिन गाँव के लोगों के साथ गोविंद भी स्वामीजी के दर्शन करने गया। उस वक़्त स्वामी योग समाधि में था। हाथ में रुद्राक्षमाला थी, बगल में कमण्डलु था। उसके साथ बलवान शिष्य भी थे। सब के लंबी-लंबी दाढ़ियाँ थीं, सब गेरुए वस्त्र धारण किये हुए थे। वे कभी कुल मिलाकर साधुओं जैसे लग रहे थे।

लोग एक-एक करके स्वामीजी के निकट जाकर उससे अपने मन की बात बता रहे थे। स्वामीजी मुस्कुराकर जवाब देते और फिर आँखें बंद कर लेते थे। गोविंद अपने कुत्ते के साथ वहाँ पहुँचा और स्वामीजी को प्रणाम करके खड़ा रह गया। उसका कुत्ता स्वामीजी के शिष्यों को देखते ही गुर्राने लगा। दूसरे ही क्षण वे लोग आँखें बंद करके कोई मंत्र जापने लगे।
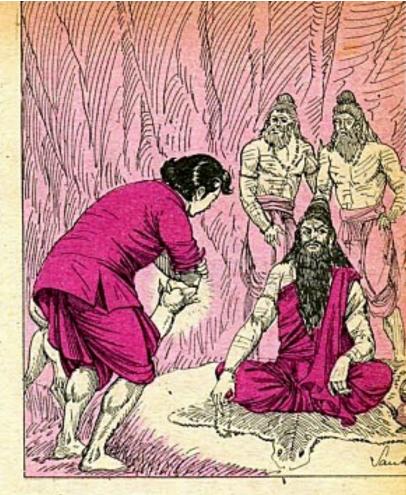
स्वामीजी ने आँखें खोल कर गोविंद की ओर तीक्ष्ण दृष्टि डाली।

"स्वामीजी, आप कृपया उसे क्षमा कीजिएगा। कुत्ता कुछ नहीं जानता।" अपने गाल पर चपत लगाते हुए गोविंद ने जवाब दिया।

"बेटा, तुम क्या चाहते हो?" स्वामीजी ने पूछा।

गोविंद ने लजाते हुए धीमे स्वर में कहा—"स्वामीजी, मैं शादी करना चाहता हूँ। कई दिनों की मेरी यह इच्छा पूरी नहीं हो रही है।"

शिष्यों ने गुरु को इशारा किया। स्वामीजी मुस्कराकर बोले—"यह तो छोटी-

सी कामना है। कोई बात नहीं, तुम चिंता न करो। मैं खुद तुम्हारी शादी शीघ्र ही कराऊँगा।"
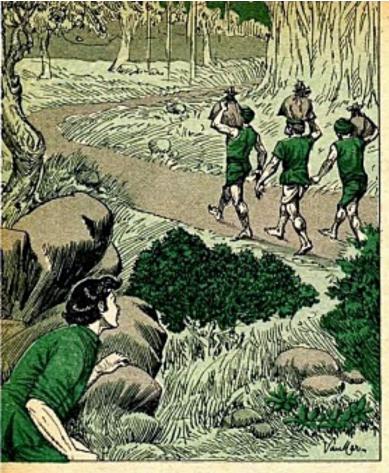
सब की इच्छाएँ जानने के बाद जब लोग मौन बैठे रहें, तब स्वामीजी उठ खड़े होकर उपदेश देने लगे :

"गाँव के चोरों के बारे में देवताओं से परामर्श लेने का काम समाप्त हो गया है। देवताओं ने गाँववालों को चोरों की झंझट से मुक्त करने को मान लिया है। लेकिन अगले शुक्रवार तक चोरों की यातनाएँ आप लोगों को सहन करनी पड़ेंगी। इसके बाद चोर यहाँ से भाग जायेंगे और इस गाँव में फटकेंगे तक नहीं। हमारे अच्छे दिन आनेवाले हैं। यही देवताओं का निर्णय है।"

इसके बाद लोग उठकर अपने-अपने घर चले गये। गोविंद के दिमाग में हरकत होने लगी। उसे मालूम हुआ कि स्वामीजी नाटक रच रहे हैं।

उस दिन रात को गोविंद बरगद से थोड़ी दूर पर एक बड़ी चट्टान के पीछे छिप गया। आधी रात के वक़्त तीन दृढ़ काय व्यक्ति भारी गठरियों के साथ स्वामीजी के निकट पहुँचे। वे लोग वे ही चोर थे जिन्हें उसने पिछली रात को स्वामीजी के साथ देखा था। वे ही स्वामीजी के शिष्य थे।

उन्हें देखते ही स्वामीजी उठ खड़े हुए। अपने आसन का ढक्कन हटाया। चोरों ने अपने साथ लाये हुए सोना, चांदी व धन उसमें डाल दिये और ढक्कन बंद किया। इसके बाद सब लोग मांस खाते, दारू पीते हुए मजाक़ करने लगे।

इसे देखने पर गोविंद का खून खौल उठा। मगर वह जल्दबाजी करे तो स्वामीजी के कथनानुसार उसी की शादी और मरम्मत होगी। वह धीरे से वहाँ से खिसक गया और गाँव पहुँचा।

गोविंद ने अपने कार्यक्रम के बारे में तीव्र रूप से सोचा। स्वामीजी को चोर

बता दे तो लोग यक़ीन नहीं करेंगे। उल्टे उसी को पीट सकते हैं। इसलिए लोगों के भोलेपन को आधार बना कर नाटक रचना होगा।

सवेरा होते ही गोविंद ने घर-घर, द्वार-द्वार पहुँच कर यह खबर दी–"आज स्वामीजी को देखने के लिए हिमालयों से अनेक योगी और साधू आ रहे हैं। स्वामीजी का आदेश है कि उनके ठहरने, खाने-पीने व उपदेश देने के वास्ते कई पंदाल और झोंपड़ियाँ बनानी हैं। इसलिए आप सब फावड़े और कुदाल लेकर तुरंत निकलिये। देरी करने पर स्वामीजी नाराज़ हो जायेंगे।"

गाँव के लोगों को फावड़े व कुदाल लेकर कोलाहल के साथ उनकी ओर बढ़ते देख स्वामीजी और उनके शिष्य घबरा गये। सबके आगे गोविंद को अपने कुत्ते के साथ चले आते देख स्वामीजी एक दम कांप उठे। देखते-देखते लोगों ने स्वामीजी और उनके शिष्यों को घेर लिया। लोग यह देख चकित रह गये कि उन्हें देख स्वामीजी थर-थर कांप क्यों रहे हैं।

गोविंद ने बिना विलंब किये स्वामीजी के समीप जाकर कहा–"स्वामीजी! आप का रहस्य खुल गया है। ये लोग आप सब को दफनाने के लिए फावड़े और कुदाल ले आये हैं।" इन शब्दों के साथ गोविंद ने स्वामीजी की दाढ़ी पकड़ कर खींच ली। वह नक़ली दाढ़ी थी, इसलिए गोविंद के हाथ आ गई। इसके बाद गोविंद ने स्वामीजी के शिष्यों की दाढ़ियाँ भी खींच डालीं।

इसे देख लोगों के गुस्से का पारा चढ़ गया। उन लोगों ने नक़ली साधुओं को पकड़कर खूब पीटा, गोविंद ने उन्हें रोका। आसन के नीचे स्थित सारा खज़ाना गाँव के बुजुर्गों को दिखाया। इसके बाद सबके गहने वापस कर दिये गये। जब स्वामीजी और उनके शिष्य कारागार में चले गये, तब गोविंद अपने कुत्ते को साथ ले गंगापुर को छोड़ दूसरे गाँव में चला गया।

भुलक्कड पत्नी-क्रोधी पति
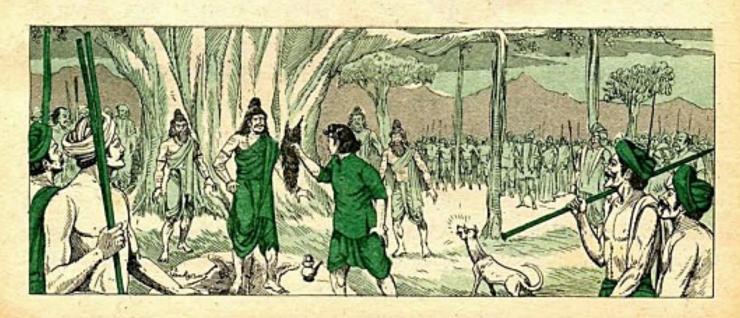
माधवगुप्त क्रोधी था, उसकी पत्नी सत्यवती भुलक्कड़ स्वभाव की थी । पत्नी के भुलक्कड़पन के कारण माधव का क्रोध और बढ़ता गया ।

एक दिन सवेरे सवेरे ही माधव ने अपनी पत्नी को जोर से पुकारा । रसोई घर में चूल्हे पर दूध में उफान आ गया था, फिर भी अन्य मनस्क बैठी सत्यवती ने पति की पुकार पर ध्यान न दिया ।

माधव क्रोध के मारे चिल्लाते रसोई घर में आया और बोला—"तुम अपने भुलक्कड़पन से मेरी जान ले रही हो! मैं अभी किसी गाँव में जा रहा हूँ । मेरे वास्ते खाना मत बनाओ । मैं रात को जरा देरी से लौट आऊँगा ।"

सत्यवती ने स्वीकृतिसूचक सर हिलाया । थोड़ी देर बाद बोली—"तुमने बताया नहीं कि इस जून के लिए कैसी सब्जी बनाऊँ?"

माधव क्रोध के मारे पागल हो उठा, बोला—"मैंने तो अभी अभी बताया था कि मैं गाँव जा रहा हूँ । जो कुछ बनाना हो, रात के लिए बनाओ ! समझीं !" यों बताकर माधव उसी वक़्त घर से निकल पड़ा ।

अपने पति के चले जाने पर सत्यवती ने अपने लिए कोई सब्जी बना ली, खाना खाकर शाम तक सो गई । इसके बाद वह अपनी सखी कामाक्षी के घर चली गई । दोनों संध्या तक बातचीत करती रहीं ।

कामाक्षी ने कहा—"तुमने बताया कि तुम्हारा पति गाँव में नहीं है । इसलिए रात को मेरे घर खाना खाकर यहीं सो जाओ ।"

अपने पति के लौटने की बात भूलकर सत्यवती कामाक्षी के घर खाना खाकर वहीं लेट गई । अंधेरा फैलने के बाद माधव घर लौट आया । घर पर ताला लगा हुआ था । इसलिए माधव गुस्से में

माधुरी भार्गव

आ गया। वह क्रोध के मारे बड़े-बड़े डग भरते आंगन में टहलने लगा।

आधी रात हो गई। पर माधव मकान के सामने टहलता ही रहा। इतने में एक चोर उधर से आ निकला। घर के इर्दगिर्द घूमनेवाले माधव को देख उसने सोचा कि यह भी कोई चोर होगा, उसकी पीठ पर थपथपाते हुए पूछा—"तुम घर के अन्दर जाना चाहते हो न?"

माधव खीज उठा और बोला—"अबे, दर्वाजे पर ताड़ के बराबर का ताला लगा हुआ है, मैं कैसे भीतर जा सकता हूँ?"

"मैं उस ताले को पल भर में खोल सकता हूँ। तुम देखते रहो कि शायद कोई इधर आ जावे! जो कुछ हाथ लगेगा, हम दोनों बराबर बांट लेंगे।" ये शब्द कहकर नकली चाभी से ताला खोलकर चोर घर के अन्दर घुस गया।

माधव की जान में जान आ गई। वह भी चोर के पीछे मकान के भीतर चला गया। तब तक चोर तिजोरीवाले कमरे में जाकर गहने चुराने की सोच रहा था। माधव ने झट से किवाड़ बंद किये, बाहर से कुंडी चढ़ा दी। तब बोला—"अबे कमबख्त चोर! तुम मेरे ही घर लूटना चाहते हो? सवेरा हो जाने दो, मैं तुम्हारी खबर लूंगा।" यों कहकर वह अपने कमरे में चला गया और लेटकर सो गया। इस गड़बड़ में वह यह बात बिलकुल भूल ही गया कि बैठक का दर्वाजा खुला हुआ है।
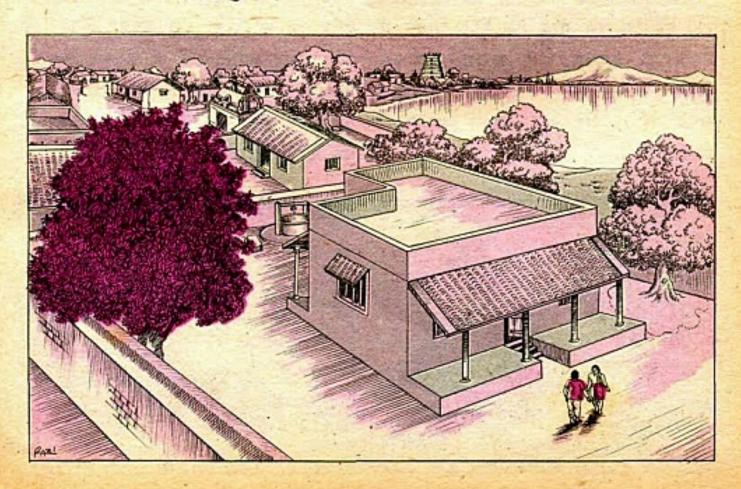
आधी रात के बीतने पर सत्यवती जाग उठी। उसे यह बात याद आई कि उसका पति रात को घर लौटनेवाला है। वह उसी वक्त कामाक्षी के मना करने पर भी अपने घर की ओर चल पड़ी। बैठक का दर्वाजा खुला हुआ था। उसने सोचा कि शायद वही ताला लगाना भूल गई है।

चोर ने खिड़की में से बाहर देखा। किसी औरत को मकान के अन्दर आते देख किवाड़ के निकट आकर बोला— "जल्दी किवाड़ खोल दो।"

अन्य मनस्का सत्यवती ने सोचा कि यह बात उसी का पति कह रहा है, उसने यह कहते किवाड़ की कुंडी खोल दी— "अरे, तुम घर के भीतर ही हो? मैं सोच रही थी कि तुम गाँव गये हो! शायद मैं बैठक का दर्वाजा बन्द करना भूल इस कमरे के किवाड़ पर कुंडी चढ़ाकर चली गई। मेरे भुलक्कड़पन पर पानी फिर जाय।"

चोर कमरे से तीर की भांति निकल आया। सत्यवती को ढकेलकर बाहर की ओर भाग खड़ा हुआ। मगर बचने की कोशिश में तिजोरी से कुछ चुरा न पाया, उल्टे वह इसके पहले चुराकर धन की जो थैली अपने साथ लाया था, उसे भी वहीं पर छोड़ चला गया।

सत्यवती की समझ में न आया कि धन की थैली कहाँ से आ गई। उसने अपने पति को जगाकर पूछा—"सुनो, धन की यह थैली तुम कहाँ से ले आये हो?"

माधव ने सोचा कि उसकी पत्नी रात को घर न लौटी, उल्टे चोर को उसने मुक्त कर दिया, साथ ही उसकी नींद में खलल डाली, एक साथ इतने अपराध किये हैं, इसके लिए उसे खूब पीटना है, पर उसके हाथ धन की थैली देख अपनी ज़िंदगी में पहली बार अपनी पत्नी के भुलक्कड़पन की तारीफ़ की। उसके विचार के अनुसार अगर वह चोर को पकड़ा देता तो शायद धन की थैली उसके हाथ न लगती।

मूक आदमी

एक व्यापारी घोड़े पर यात्रा करते दुपहर तक एक गाँव के तालाब के निकट पहुँचा। घोड़े को एक पेड़ से बांधकर नहाने के लिए तालाब में उतर पड़ा।

उसी वक्त एक दूसरा यात्री अपने कमजोर घोड़े पर उधर से आ निकला। वह भी अपने घोड़े को उसी पेड़ से बांधने को हुआ। इसे देख प्रथम यात्री ने चिल्लाकर कहा– "अजी सुनो, तुम अपने घोड़े को दूसरे पेड़ से बांध दो। मेरा घोड़ा बड़ा ही दुष्ट है।" पर दूसरे मुसाफ़िर ने उसकी बातों की परवाह न की। उसने उसी पेड़ से अपना घोड़ा बांध दिया। फिर क्या था, कमजोर घोड़े ने दुष्ट घोड़े को छेड़ दिया। दोनों लड़ने लगे। अंत में कमजोर घोड़ा मर गया।

व्यापारी से दूसरे यात्री ने अपने घोड़े का मुवाअज़ा माँगा, पर व्यापारी ने न माना। वे दोनों उस गाँव के न्यायाधिकारी के पास पहुँचे। दूसरे यात्री ने व्यापारी पर फरियाद की। न्यायाधिकारी ने व्यापारी से पूछा–"सुनो, तुम इसका क्या जवाब देते हो?"

व्यापारी की समझ में न आया, वह चारों ओर नज़र दौड़ाने लगा।

"अजी, यह तो मूक आदमी मालूम होता है। तुम इस पर शिकायत करते हो?" न्यायाधिकारी ने पूछा।

"यह मूक आदमी है? इसने चिल्लाकर कहा था–"मेरा घोड़ा दुष्ट है, तुम अपने घोड़े को दूसरे पेड़ से बांध लो।" दूसरे ने कहा। पर उसकी फ़रियाद टिक न पाई.
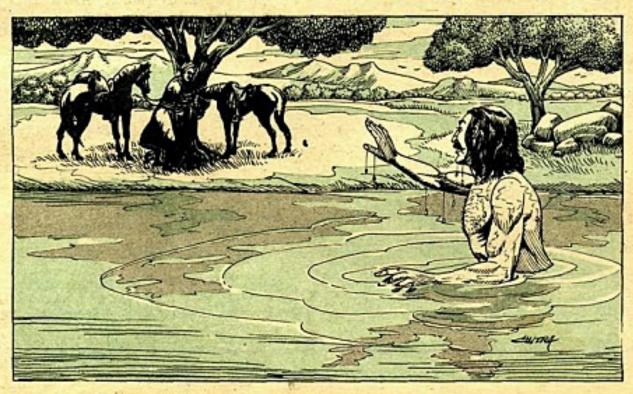
तीन अद्भुत चीजें

एक गांव में एक जमीन्दार था। उसकी जमीन्दारी क़रीब क़रीब नष्ट हो चुकी थी। उसके भाग्यवती नामक एक पोती थी जो असाधारण रूपवती थी। इस कारण अनेक युवक भाग्यवती के साथ विवाह करने आगे आये। पर जमीन्दार ने उन युवकों के सामने एक परीक्षा रखी। वह यह थी–जो युवक तीन दिशाओं से तीन अद्भुत चीज़ें लायगा, उसके साथ वह अपने पोती का विवाह करेगा। उन अद्भुत चीज़ों को लाने का कुछ युवकों ने साहस किया, मगर वे उसमें सफल न हो सके। इसलिए अन्य युवकों ने हताश हो अपना यह विचार त्याग दिया।

उसी गाँव में जयंत नामक एक क्षत्रिय युवक था। वह एक अपूर्व साहसी के रूप में मशहूर हो चुका था। उसने भाग्यवती के साथ विवाह करने का निश्चय किया। कमर में तलवार लटकाये घोड़े पर सवार हो वह युवक जमीन्दार के सामने आया।

जयंत को देख जमीन्दार ने पूछा–"तुम जानते हो न कि मेरी पोती के साथ विवाह करने के लिए तीन अद्भुत चीज़ें लानी होंगी?"

जयंत ने पूछा–"वे चीज़ें क्या हैं?"

"तुम सीधे दक्षिणी दिशा में जाओगे, तो एक पुराना उजड़ा हुआ मंदिर दिखाई देगा। सुना है कि उसके अहाते में भूगर्भ के अन्दर कोई गुफा है। उस गुफा के भीतर एक डफली है। उसे बजाने पर कुछ लोग हमारे सामने उपस्थित हो जायेंगे और हम उन्हें जो भी आदेश देंगे, वे उसे पूरा करेंगे। पहले तुम वह डफली ले आओ, तब मैं बाक़ी दोनों चीज़ों का विवरण दूंगा।" जमीन्दार ने समझाया। जयंत जमीन्दार की अनुमति लेकर

रामयश शर्मा

दक्षिणी दिशा में चला गया। वह दस दिन बाद थका-मांदा लौट आया। आज तक अद्भुत चीज़ों की खोज में गया हुआ कोई युवक लौट न आया था। इसलिए जमीन्दार ने विस्मय में आकर पूछा—"क्या तुम डफली ले आये हो?"

जयंत ने झट अपनी थैली में से एक डफली निकालकर जमीन्दार के हाथ दी। जमीन्दार ने डफली को चारों तरफ़ पलटकर देखा और उसे बजाई। दूसरे ही क्षण कहीं से दस आदमी दौड़े-दौड़े आ पहुँचे। उन लोगो ने पूछा—"मालिक, बताइये, क्या आज्ञा है?"

"तुम लोग मेरे बगीचे में बाड़ी लगा दो।" जमीन्दार ने आदेश दिया, इस पर दसों आदमी उसी क्षण वहाँ से चले गये।

"अब आप दूसरी चीज़ का विवरण दीजिए।" जयंत ने जमीन्दार से पूछा।

"तुम पश्चिमी दिशा में जाओगे तो एक और उजड़ा मंदिर दिखाई देगा। उसके नीचे भूगर्भ में एक तावीज़ है। उसे बांधनेवाले लोग समय के गुजरते जवान होते जायेंगे।" जमीन्दार ने समझाया।

जयंत ने पश्चिमी दिशा की ओर रवाना होते हुए घूमकर देखा। खिड़की के पास खड़ी हो उसकी ओर विस्मयपूर्वक देखनेवाली भाग्यवती उसे दिखाई दी।

थोड़े दिन बाद जयंत फटे-पुराने वस्त्रों के साथ लौट आया और उसने जमीन्दार के हाथ तावीज़ रखी।
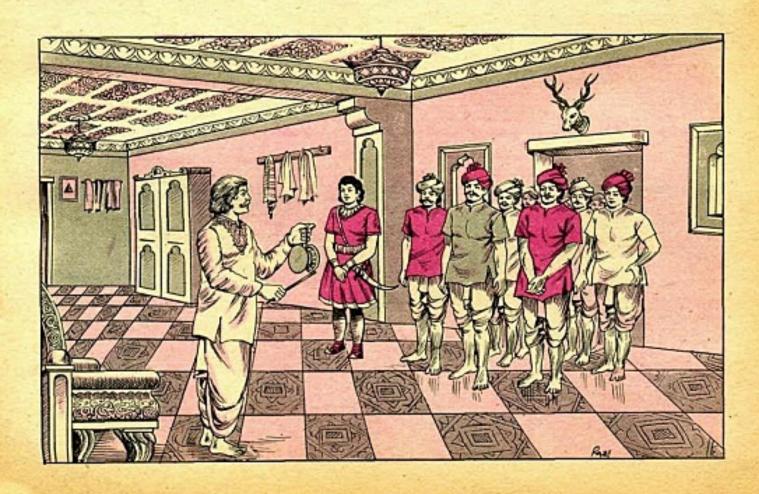
जमीन्दार उस तावीज़ को अपने हाथ में लेते हुए बोला–"शाबाष! तुम्हीं हमारी भाग्यवती के लिए योग्य वर हो! पर अब तुम उत्तरी दिशा में जाकर एक उजड़े मंदिर में स्थित बोलनेवाले तोते को पकड़ लाओ।"

जयंत ने इस बार पुनः खिड़की की ओर देखा। चमकनेवाली आँखों से उसकी ओर ताकनेवाली भाग्यवती उसे दिखाई दी।

थोड़े दिन बाद जयंत घायल शरीर के साथ जमीन्दार के सामने हाज़िर हुआ और पिंजड़े में बंद तोता जमीन्दार के हाथ थमाया।

"हे तोते! मुझे एक सौ स्वर्ण मुद्राएँ चाहिए।" जमीन्दार ने तोते से पूछा।

"कल सुबह आप को सौ स्वर्ण मुद्राएँ मिल जायेंगी।" तोते ने झट जवाब दिया।

जमीन्दार ने जयंत को उस रात के लिए अपना अतिथि बनाया। दूसरे दिन सवेरे जमीन्दार किवाड़ खोल बाहर आया तो उसे सौ स्वर्ण मुद्राओं की थैली दिखाई दी।

फिर क्या था, जमीन्दार ने दूसरे ही दिन अपनी पोती भाग्यवती का विवाह जयंत के साथ कर दिया। जयंत भाग्यवती को अपने घर ले गया।

थोड़े दिन बीत गये। जमीन्दार ने तोते से पूछा–"हे तोते! मुझे अब एक हज़ार स्वर्ण मुद्राएँ चाहिए।"

"एक हज़ार मुद्राएँ कहाँ से ला सकता हूँ? जयंत ने तो यह सब नाटक रचा है। मैं उसका पालतू तोता हूँ।" ये शब्द कहते तोता उड़कर चला गया।

जमीन्दार हताश हो गया। उसने डफली निकालकर बजाई, डफली तो फट गई, पर कोई सेवक उसके सामने हाज़िर न हुआ।

इस पर जमीन्दार अपने हाथ में बन्धी तावीज़ निकालकर छाती पीटते हुए चिल्ला उठा–"यह सब धोखा है! सरासर दगा है!"

पंडित की आत्मा
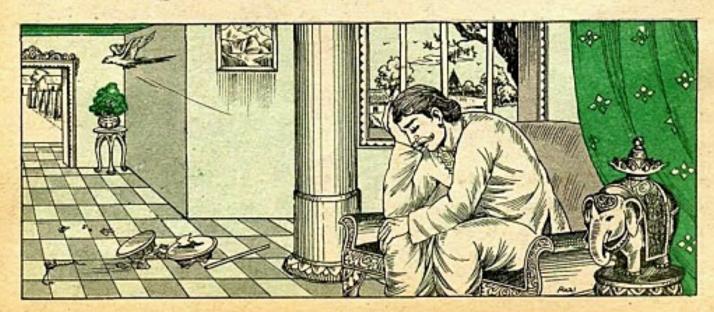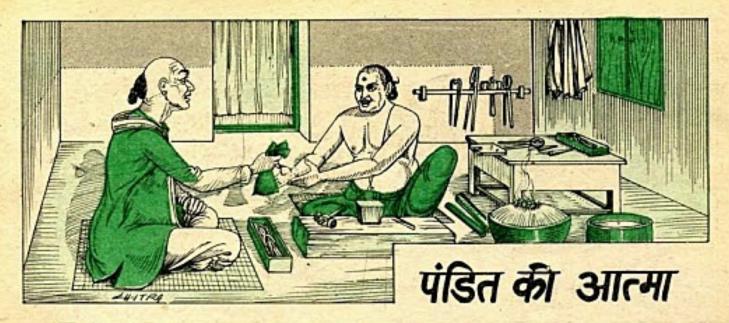
एक गाँव में दिगंबर नामक एक पंडित था। वह उस गाँव की प्राथमिक पाठशाला में शिक्षक था। वह बड़ा ही सज्जन पुरुष था। गाँववाले दिल से उसे चाहते थे। दिगंबर की पुत्री सुलेखा का विवाह एक दूसरे गाँव के शिक्षक के साथ हो चुका था। वह साल में एक बार अपने पिता को देखने पीहर आया करती थी। दिगंबर भी साल में एक-दो बार अपनी पुत्री सुलेखा को देखने जाया करता था।

सुलेखा की शादी के बाद पंडित दिगंबर की पत्नी का देहांत हो गया। इसके बाद दिगंबर को एक साथ घर और पाठशाला को भी संभालना पड़ा। पत्नी के मरने के बाद घर का खर्चा कम होने लगा, इस पर दिगंबर ने अपने वेतन में से प्रति मास थोड़ा-थोड़ा करके धन बचाकर बेटी के लिए एक हार बनाना चाहा और नकुलेश्वर नामक स्वर्णकार के यहाँ अपने बचाये हुए सारे वे रुपये सौंपता गया। इस तरह दो साल तक जो धन बचायेगा, उस रक़म से नकुलेश्वर हार बनाकर दे देगा।

सुलेखा जब एक बार पंडित दिगंबर को देखने आई, तब उसने अपना यह विचार बेटी को बताया।

सुलेखा ने कहा था—"पिताजी! आप तो वृद्ध होते जा रहे हैं। बचे हुए वे रुपये खर्च करके आप दूध लेते जाइए। आप मेरे वास्ते रुपये क्यों नाहक़ बचाते जा रहे हैं?"

"नहीं बेटी! मैं तुम्हारी शादी के वक़्त भी चाहते हुए भी ज्यादा गहने दे न पाया। अलावा इसके तुम्हारी माँ तुम्हें एक हार बनाकर देना चाहती थी, वह पूरा न कर पाई।" दिगंबर ने यों अपनी बेटी को समझाया।
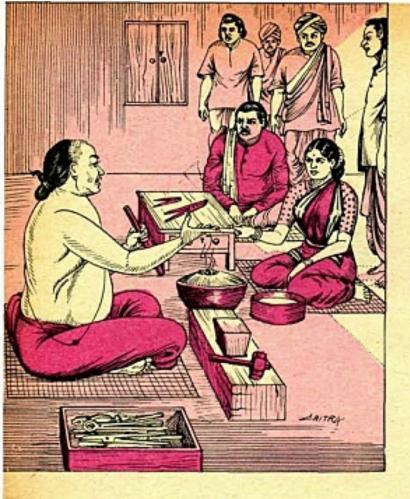
नकुलेश्वर को हार के लिए रुपये चुकाने की अवधि दो साल बीतने को थी, एक दिन अचानक पाठशाला में दिगंबर को छाती में दर्द हुआ और वह बेहोश हो गिर गया। विद्यार्थी सब घबरा गये और गाँववालों को बुला लाये। सब ने मिल कर दिगंबर को घर पहुँचाया। वैद्य ने आकर कोई इलाज किया। सुलेखा को इसकी खबर दी गई। गाँववाले बारी-बारी से दिन-रात दिगंबर की सेवा में लगे रहें। इस बीच सुलेखा भी अपने पति के साथ आ पहुँची।

दिगंबर तीन दिन तक बेहोश रहा। चोथे दिन दुपहर को आँखें खोलकर कुछ कहने को हुआ, पर मुँह से बोल न फूटे। आखिर दम घुटने के कारण तड़प कर प्राण त्याग दिये।

सुलेखा ने दिगंबर की इच्छा के अनुसार उसका घर पाठशाला के लिए दे दिया, अपने पिता की अंत्येष्ठि क्रियाएँ कराईं। गाँव के सभी लोगों ने आकर सुलेखा के प्रति सहानुभूति जताई, पर नकुलेश्वर नहीं आया। इस पर सुलेखा खुद नकुलेश्वर को देखने गई।

नकुलेश्वर नकली पीड़ा का अभिनय करते बड़ी सहानुभूतिपूर्ण स्वर में बोला– "बेटी, दिगंबर दादा की मृत्यु इस गाँव के लिए भारी क्षति है। मैं तुम्हें देखने खुद आना चाहता था। लेकिन इधर चार-पांच दिनों से मेरी तबीयत भी ठीक नहीं है।"

"दादा, आप चिंता न कीजिए, बेचारे आप कैसे मेरे घर आ सकते थे, जब कि आप स्वयं बीमार हैं, लेकिन इधर मुझपर ज़्यादा खर्च आ पड़ा है। मेरे पिताजी ने आपके पास जो धन बचा कर रखा था, क्या उसे मुझे लौटायेंगे?" सुलेखा ने पूछा।

"कैसा धन? तुम्हारे पिता ने मेरे हाथ में कभी कुछ दिया तक नहीं, बेटी। यह तुम क्या कहती हो? क्या मुझे गाँव

वालों के बीच बननाम करना चाहती हो? मैंने सोचा था कि तुम भली लड़की हो! आज मालूम हुआ कि समय पाकर लोग कैसे बदल जाते हैं?" नकुलेश्वर ने साफ़ जवाब दिया।

"पिछले महीने पिताजी ने मुझसे कहा था कि वे हर महीने आपके पास थोड़ा-थोड़ा करके धन बचाते जा रहे हैं और उस धन से मेरे लिए सोने का हार बनाकर देना चाहते थे। क्या वे झूठ बोल सकते हैं?" सुलेखा ने पूछा।

"यह सब मैं नहीं जानता। मैं इतना ही जानता हूँ कि तुम्हारे पिता ने मेरे हाथ कुछ नहीं दिया।" नकुलेश्वर ने कहा।

सुलेखा के साथ गाँव के जो बुजुर्ग नकुलेश्वर के घर आये थे, सब ने समझाया कि पंडितजी के रुपये सुलेखा के हाथ लौटा दे, पर नकुलेश्वर ने साफ़ इनकार कर दिया।

उन लोगों में सोमनाथ नामक एक जादूगर था। वह भूतों का आवाहन करने और उन्हें भगाने में विशेष प्रवीण था। उसने आगे बढ़कर कहा–"अच्छी बात है। इस बात के कोई गवाह नहीं है कि पंडितजी ने आपके हाथ रुपये दिये हैं। इसकी लिखा-पढ़ी भी नहीं हुई है।
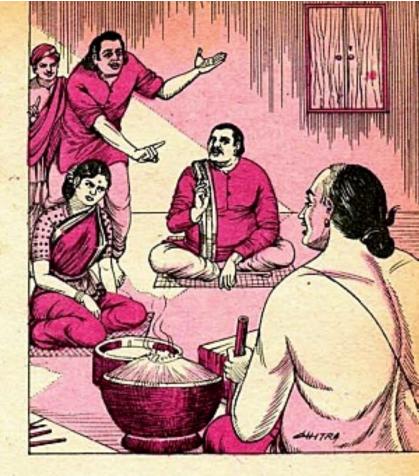
दिगंबर पंडितजी का अचानक देहांत हो गया है। इसलिए यह समस्या बड़ी जटिल बन गई है। इसे हल करना हो तो दिगंबर पंडित की आत्मा का आवाहन करके मैं गवाही दिलाऊँगा। इसमें आप को कोई आपत्ति नहीं है न?"

सबने एक स्वर में सम्मति दी।

निश्चित दिन दिगंबर के मकान के अहाते में लोग इस विचित्र दृश्य को देखने भारी संख्या में इकट्ठे हो गये। संध्या के समय सोमनाथ एक मिट्टी का मटका व ढक्कन ले आया और बोला–"आपमें से कोई एक जाकर पिछवाड़े के नींबू के पेड़ से पके नींबू तोड़ लाइए।"

दिगंबर के घर के पिछवाड़े में एक नींबू का पेड़ था। वह दिगंबर के लिए अत्यंत प्यारा था। वह साल-भर फल देता था। खाने में दिगंबर हर जून नींबू का उपयोग करता था। दिगंबर की इच्छा के अनुसार उस नींबू के समीप उनका दाह-संस्कार किया गया था।

चार आदमी जाकर एक टोकरी-भर नींबू तोड़ लाये। सोमनाथ ने गाँववालों से कहा—"दिगंबर पंडित के मरे पांच ही दिन हो गये हैं। इसलिए उसकी आत्मा अभी तक यहीं पर मँडराती होगी। मैं उसका आवाहन करके उन के लिए प्रिय नींबू रस को चखाऊँगा। यदि दिगंबर पंडित का आपको रुपये देने की बात सच है तो उनके इस मटके में प्रवेश करने का सबूत दिखाऊँगा।" यों समझाकर सोमनाथ ने सारे नींबू काट डाले, उसका रस मटके में निचोड़ दिया। मटके को एक कपड़े से ढककर उस पर ढक्कन रख दिया। इसके बाद वह कोई मंत्र जापने लगा।

जल्दी ही मटके में कोई हलचल शुरू हो गई। नींबू का रस उबलने लगा। मटके के भीतर से फेन निकला और वह ढक्कन को उछालने लगा।

इस पर सोमनाथ ने कहा—"पंडित की आत्मा गवाही दे रही है। उनके रुपये नकुलेश्वर के पास हैं। नकुलेश्वर को यह बात मान लेनी है, वरना मैं पंडितजी की आत्मा का प्रयोग नकुलेश्वर पर कर देता हूँ।"

नकुलेश्वर ने अपनी गलती मान ली। सुलेखा ने सोने का हार ले लिया।

सोमनाथ ने जो जादू किया था, वह यह था—उसने मटके पर जो कपड़े ढक दिया था, उसमें कपड़े धोनेवाले शोड़े का ढेला छिपा रखा था। उसे धीरे से नींबू के रस में सरका दिया था। उसे खटाई के लगते ही ज़ोर से उफान आया, उबल कर धुएँ छोड़ते फेन पैदा करने लगा। इसीलिए ढक्कन उछलने लगा था। यही उसका जादू था।

दवा की खोज में
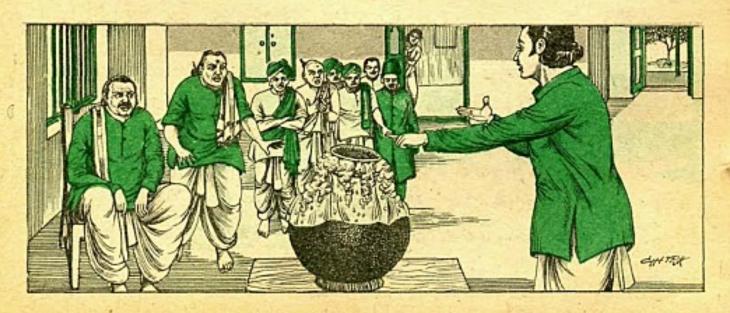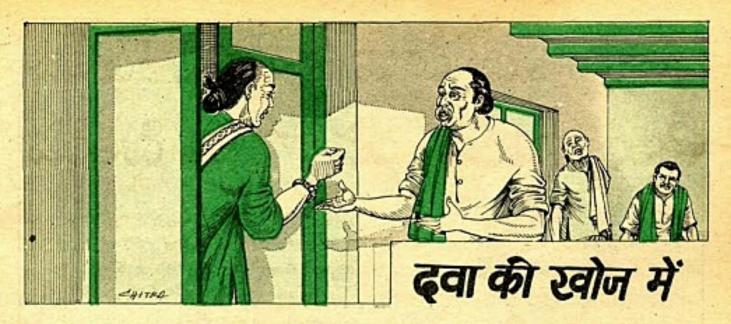
रामापुर गाँव में अनंतवर्मा एक ही वैद्य था। वह एक हफ़्ते पहले किसी गाँव में गया था। लौटने पर उसे खबर मिली कि पटवारी के नौकर दो-चार दिन से उसकी खोज में घर बराबर आ रहे हैं। बात यह थी कि इधर चार दिन से पटवारी बुखार से पीड़ित है। तेज बुखार की वजह से वह अपनी आँख तक खोल नहीं पा रहे हैं। इस खबर के मिलते ही अनंतवर्मा दवाइयों की पेटी के साथ पटवारी के घर दौड़ पड़ा।

पटवारी का बुखार तेज था। वह जिस कमरे में बुखार से पीड़ित हो पड़ा हुआ था उसके सामने पटवारी के रिश्तेदार और गाँव के बुज़ुर्ग भी अनंतवर्मा के इंतज़ार में बैठे हुए थे।

अनंतवर्मा पटवारी के घर पहुँचते ही सीधे रोगी के कमरे में पहुँचा और उसने तत्काल कमरे के किवाड़ बंद किये। एकांत में रोगी की जांच करना वैद्य अनंतवर्मा की आदत थी।

बड़ी देर तक जब अनंतवर्मा कमरे से बाहर न आया, इस पर कमरे के बाहर रोगी का हाल जानने के लिए इंतज़ार करनेवालों की अतुरता बढ़ती गई।

इतने में अनंतवर्मा ने एक किवाड़ थोड़ा-सा खोल कर पटवारी के बड़े पुत्र से पूछा—"बेटा, एक बड़ी कील की ज़रूरत है। जल्दी ले आओ।"

पटवारी का पुत्र कुछ ही पलों पर कील ले आया। वैद्य उसे लेकर तुरंत अन्दर गया और उसने किवाड़ फिर से बंद कर लिया।

इसके कुछ क्षण बाद कमरे के भीतर से धीमी आवाज होने लगी! थोड़ी देर बाद किवाड़ आधे खुले। वैद्य ने बाहर

कृपाल सिंह

झांककर देखा। पटेल ने पूछा–"वैद्यजी! पटवारी का अब कैसा हाल है?" इस पर ध्यान दिये बिना वैद्य यही बोला–"फिलहाल एक हथौड़ा मँगवा दीजिए। रोगी के बारे में बाद को बात कर सकते हैं।"

हथौड़ा लाया गया। उसे हाथ में लेकर वैद्य ने फिर से किवाड़ बंद किये। इस बार कमरे के भीतर से बड़ी आवाज़ होने लगी।

थोड़ी देर बाद फिर किवाड़ खुल गये।

पटवारी के छोटे भाई ने घबराये हुए स्वर में पूछा–"भैया का कैसा हाल है?"

"यह बात मैं फिर सुनाऊँगा। पहले एक कुदाल मँगवा दीजिए।" वैद्य ने कहा।

किसीने कुदाल लाकर वैद्य के हाथ पकड़ा दिया। कुदाल लेकर वैद्य ने इस बार भी किवाड़ बंद कर लिये।

इस बार कमरे के भीतर से ज़ोर की आवाज़ आने लगी।

बाहर बैठे हुए लोगों की समझ में न आया कि भीतर वैद्य आखिर क्या कर रहा है। उनकी घबराहट और बढ़ गई। कुछ लोगों ने किवाड़ खटखटाकर वैद्य को बाहर आ जाने को कहा। पर भीतर से कोई जवाब न आया। आवाज़ भी बढ़ती गई।

पटेल की सहनशीलता जाती रही। उसने कहा–"अब इंतजार करने से कोई फ़ायदा नहीं। किवाड़ तोड़ कर असली बात का पता लगा लीजिए। कान के पर्दे फटे जा रहे हैं। यह आवाज़ कैसी? आखिर किसलिए?"

कुछ ही मिनटों में सबने मिलकर किवाड़ तोड़ डाले। कमरे के भीतर जहाँ पटवारी लेटा हुआ था, उस खाट के समीप में फ़र्श पर बैठे वैद्य अपनी दवाइयों की पेटी के ताले को तोड़ने के लिए कील, हथौड़ा तथा कुदाल का प्रगोग करते उन्हें दिखाई दिया।

इसे देख तब तक घबराये हुए सभी लोग एक साथ ठहाके मारकर हँस पड़े।
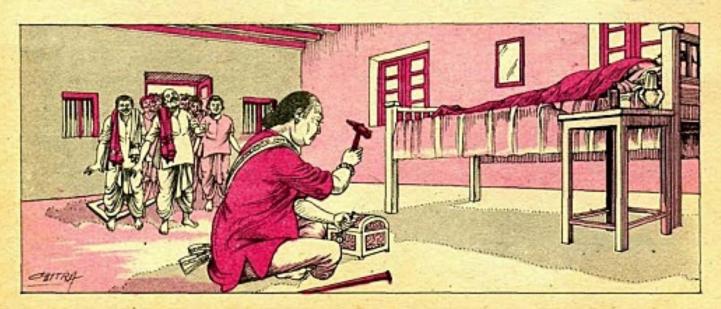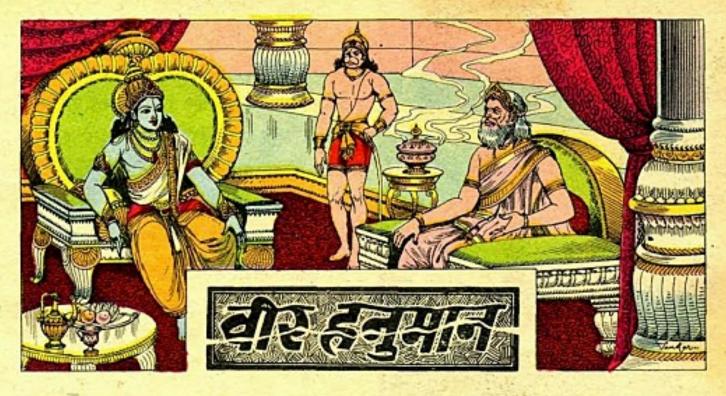
अयोध्या में अत्यंत वैभव के साथ रामचन्द्र का राज्याभिषेक संपन्न हुआ। इसके बाद वे स्वयं शासन के कार्यों में दिलचस्पी लेने लगे। एक दिन रामचन्द्रजी ने सुमंत को बुलवाकर आदेश दिया कि राज्य में भारी पैमाने पर जनता के उपयोगी कार्यक्रम अमल करने हैं, इसके लिए आवश्यक धन-संग्रह करे।

सुमंत ने समझाया–"महाप्रभु! पिछले चौदह वर्षों से जनता ने कर देना बंद कर दिया है।"

रामचन्द्रजी ने सहानुभूतिपूर्वक कहा–"शायद राज्य में समय पर वर्षा न होने के कारण अकाल पड़े हो और जनता ने नाना प्रकार की यातनाएँ झेली हों।"

सुमंत पल भर संकोच में पड़ा रहा, तब हिम्मत बटोरकर बोला–"ऐसी कोई बात नहीं है, प्रभू! राज्य हरा-भरा है, धन-धान्य से भरपूर है, मगर लोगों के दिलों में परिवर्तन आ गया है। धनी व्यापारियों ने कर चुकाना बंद किया है। किसानों ने भी यही किया है। धनी तो और धनी बन बैठे हैं। गरीब पहले से ज्यादा गरीब हो गये हैं।"

"ऐसा क्यों हुआ है? भरत आज तक क्या कर रहे थे?" रामचन्द्रजी ने कठोर होकर पूछा।

"प्रभू! राजा भरत ने शासन ही कब किया है? उन्होंने चौदहों वर्ष आप की पादुकाओं की पूजा करते बिताया है।
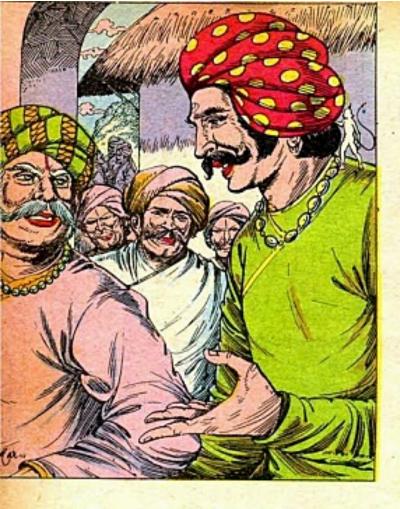
उनके इस भोलेपन से लाभ उठाकर, उनके सामने आप का यश गाते हुए, अनेक लोगों ने पुरस्कार के रूप में धन प्राप्त किया है। जब हमने उन्हें एक शासक के रूप में स्परण दिलाया, तब उन्होंने यही कहा था–"जो लोग कर नहीं चुका सकते, उन्हें सताओ मत! वे सब मेरे भाई रामचन्द्रजी के नागरिक हैं। ये शब्द सुनने के बाद मुझे तो अपने शासक के आदेश का पालन करना पड़ा।" सुमंत ने समझाया।

रामचन्द्रजी ने सारी हालत समझ ली। "अब मैं शासन कैसे चला सकता हूँ?" यों उन्होंने गहरी सांस ली, तभी वहाँ पर लक्ष्मण आये।

सुमंत ने लक्ष्मण को भी खज़ाने के खाली होने का समाचार सुनाया।

लक्ष्मण थोड़ी देर तक सोचते रहे, तब बोले–"तब तो मेरी बात मानकर एक काम कीजिएगा। आप लोग इस आशय का ढिंढोरा पिटवा दीजिए कि जिन्हें कर चुकाना है, वे सब एक कुम्हाड़े के बराबर का सोना खज़ाने में जमा कर दे। ऐसा करने से जनता के प्रति कोई अन्याय नहीं होगा। मैं आप को इस बात का आश्वासन देता हूँ।"

रामचन्द्रजी ने तत्काल अपनी स्वीकृति दी। फिर क्या था, सारे कोसल देश में ढिंढोरा पिटवाया गया। लक्ष्मण जानते थे कि चौदह साल से कर न चुकानेवाले लोग कुम्हाड़े के बराबर क्या, हाथी के सिर के बराबर का सोना भी देने को तैयार हैं। फिर भी लक्ष्मण ने हनुमान को बुलाकर समझाया–"तुम लोगों के बीच गुप्त रूप से विचरण करते हुए इस बात का पता लगाओ कि कहीं लोग इस ढिंढोरे से असंतुष्ट तो नहीं हैं? यह समाचार मुझे शीघ्र देना होगा! समझे!"

इसके बाद हनुमान सूक्ष्मरूप में जनता के बीच गया, उनका वार्तालाप सुनकर लौट आया। तब लक्ष्मण से बोला–"लोगों को कुम्हाड़े के बराबर का सोना देने में

कोई आपत्ति नहीं है, उल्टे उनका विचार है कि भरत से भी रामचन्द्रजी कहीं अधिक भोले हैं। साथ ही वे लोग इस बात पर ज़्यादा प्रसन्न हैं कि इतने वर्षों का कर न चुकाने के उपलक्ष्य में उनसे कई कुम्हाड़ों के बराबर का सोना जमा करने को कहा नहीं गया है।"

ये बातें सुनने पर लक्ष्मण के मन में एक संदेह पैदा हुआ। जनता में कुछ लोग तो अवश्य ईमानदार होंगे। ऐसे लोगों के प्रति अन्याय नहीं होना चाहिए। कुम्हाड़े के बराबर के सोने से भी कम चुकानेवाले हो तो उन्हें नाहक़ तक़लीफ़ नहीं होनी चाहिए।

लक्ष्मण ने इस समस्या के समाधान पर विचार किया, उन्हें कोई उपाय सूझा, तब हनुमान को साथ लेकर वे धर्मदेवता के मंदिर में चले गये। मंदिर में थोड़ी देर बिताकर लक्ष्मण तथा सूक्ष्मरूप में हनुमान भी वार्तालाप करते बाहर आये। तब तक सूर्यास्त हो चुका था और चारों तरफ़ अंधेरा फैल चुका था।

सबेरा होते ही राजमहल के आंगन में एक बहुत बड़ा तराजू लटकाया गया। एक पलडे में एक साधारण कुम्हाड़ा रखा गया। लोग सोने की गठरियाँ बांधकर वहाँ आ पहुँचे। उनमें से एक ने सब से
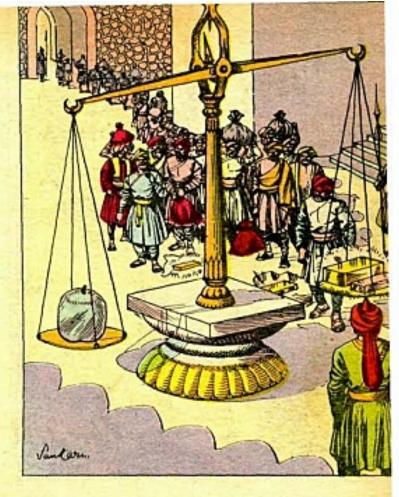
पहले अपना सोना दूसरे पलड़े में डाल दिया। पर कुम्हाड़ेवाला पलडा ऊपर नहीं उठा। वह आश्चर्य में आ गया। सर खुजलाते वह अपने घर चला गया और इस बार सोने की बड़ी गठरी लेकर लौट आया। सारा सोना पलड़े में डालने पर वह कुम्हाड़े के बराबर तुल गया। इसे देख लोग घर लौट गये और थोड़ा सोना लेकर शीघ्र लौट आये।

जनता में से एक व्यक्ति ने डरते हुए अपने पास का थोड़ा-सा सोना पलड़े में डाल दिया। उस थोड़े-से सोने से पलड़ा भारी मालूम हुआ। इसे देख लोग अचरज में आ गये।

इस प्रकार कई लोगों ने तराज़ू में सोना डाल दिया, तब उन्हें मालूम हुआ कि यह कोई साधारण तराज़ू नहीं है, इसमें कोई महिमा है, यह तराज़ू उतना ही लेता है जितना कि न्यायपूर्वक राजा को मिलना चाहिए। इस पर जनता ने प्रसन्नतापूर्वक उतना धन चुकाया, वास्तव में उन्हें जितना चुकाना था। इस प्रकार बहुत सारा सोना वसूल हुआ और खजाना भर गया।

इसे देख रामचन्द्रजी विस्मय में आ गये। उन्होंने लक्ष्मण तथा सुमंत को अपने गुप्त मंत्रणा गृह में बुला भेजा। उनके पीछे हनुमान भी सूक्ष्म रूप में उस कक्ष में पहुँचे। रामचन्द्रजी ने गरजकर लक्ष्मण से पूछा—"लक्ष्मण! कुम्हाड़े का वजन कितना होगा? वह तो कई मन सोने के बराबर तुल गया। अलावा इसके उसने तरह-तरह के वज़न दिखाये। ऐसा क्यों? यह जनता के प्रति अन्याय तो नहीं है? तुम सबने मिलकर जनता को धोखा दिया है। क्यों यह बात सच है न?"

लक्ष्मण ने हाथ बांधकर कहा—"प्रभू! इसमें धोखा कुछ नहीं है। यह सारा काम धर्मदेवता के आदेशानुसार हो गया है। इस कार्य में हमारे हनुमान ने भी कम श्रम नहीं उठाया है। हनुमान तराज़ू के मध्य भाग में पकड़कर सूक्ष्म रूप में खड़ा था। धर्म देवता के आदेशानुसार जिस ओर जितना वज़न दिखाना है, उतना ही उस ओर अपने पैर से दबाता रहा। धर्मदेवता ने क्या कहा था, यह बात केवल हनुमान ही जानता है। मैंने तथा हनुमान ने धर्म देवता से प्रार्थना करके इस प्रकार की सहायता प्राप्त की है। जनता में ईमानदारी के साथ कर चुकानेवालों की संख्या बहुत ही कम है। कर न चुकानेवालों की संख्या अधिक है। इस समय हमने न्यायपूर्वक जितना हमें प्राप्त होना चाहिए था, उतना वसूल किया है। यह योजना बनाने में

मुझे तथा हनुमान को काफ़ी श्रम उठाना पड़ा था।"

रामचन्द्रजी कुछ कहने को थे, तभी धर्म देवता की अदृश्य वाणी यों सुनाई दी–"रामचन्द्रजी! लक्ष्मण का कहना सही है। जनता के प्रति कोई अन्याय नहीं हुआ है। यह सब मेरे आदेशानुसार हुआ है।" इसके बाद हनुमान अपना सूक्ष्मरूप त्यागकर वास्तविक रूप में प्रत्यक्ष हुआ और रामचन्द्रजी को प्रणाम किया। रामचन्द्रजी ने हनुमान की बड़ी प्रशंसा की।

इसके थोड़े दिन बाद श्रीरामचन्द्र ने कोसल नगर के नागरिकों को दावत दी। उस दावत के लिए आवश्यक सामग्री मंगाने, पंडाल डलवाने का सारा कार्य हनुमान ने अपने पर्यवेक्षण में पूरा किया।

सीताजी ने हनुमान के कार्य को देखा। वह हनुमान के प्रति पुत्र जैसा वात्सल्य भाव रखती थीं। लंका में पहली बार उनका पता लगानेवाला व्यक्ति वही था। उन्होंने हनुमान को निकट बुलाकर कहा–"बेटा, हनुमान! सवेरे से तुम पल भर भी आराम किये बिना मेहनत कर रहे हो। भोजन का वक़्त हो चुका है। अतिथियों की देखभाल करने की जिम्मेदारी तुम पर है। इसलिए सबसे पहले तुम भोजन कर लो, बाद तुम्हें समय न मिलेगा।"

हनुमान ने सीताजी की बात मान ली और उनके पीछे रसोई घर में गया। सीताजी ने हनुमान को पत्तल में खाना परोसा। हनुमान को जो भी परोसा जाता था, उसे दूसरे ही क्षण वह समाप्त करता गया। इस प्रकार थोड़ी ही देर में उसने हज़ारों के लिए बनाया गया खाना खतम कर डाला। इसे देख सीताजी अचरज में आ गईं और दौड़कर रामचन्द्रजी के पास जाकर सारा वृत्तांत सुनाया।

रामचन्द्र ने मुस्कुराकर कहा–"हनुमान और कोई नहीं, परम शिव है। वह इस रूप में अवतरित हुआ है। उसे न मालूम तुम कैसे तृप्त कर सकोगी? यह तुम्हारी

“माताजी! अब मेरा पेट भर गया है!” इन शब्दों के साथ हनुमान रसोई घर से बाहर निकला।

तदुपरांत सीताजी ने अन्नपूर्णा देवी का ध्यान किया। कुछ ही क्षणों में सारी हंडियाँ विभिन्न पदार्थों से भर गयीं। नगर के नागरिक तथा बानरों को भोज में बुलाया गया। बानरों की पंक्ति में सबसे अंत में एक छोटा बानर था। उसने अचार के आँवले को विचित्र ढंग से देखकर उसे अपनी उंगलियों से दबाया, तब आँवले का बीज तुप् आवाज़ के साथ ऊपर उड़ गया।
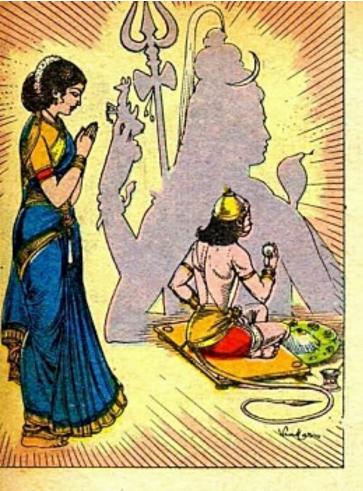
प्रज्ञा पर आधारित है। मैं तो कुछ नहीं कर सकता।”

इसके बाद सीताजी रसोई घर में आकर हनुमान के पीछे खड़ी हो गईं। हनुमान ताबड़-तोड़ खाते जा रहा है। इस पर सीताजी ने अपने मन में कहा– “परमेश्वर! मैं समझ गई कि आप कौन हैं? अब आप अपनी भूख को शांत न करेंगे तो हमारी प्रतिष्ठा मिट्टी में मिल जाएगी।” यों सोचकर उन्होंने तीन बार पंचाक्षरी मंत्र का पठन किया।

दूसरे ही क्षण हनुमान ने तृप्तिपूर्वक डकार लिया। सीताजी ने सामने आकर पूछा–“बेटा! थोड़ा खाना और परोस दूँ?”

छोटा बानर यह कहते उछल पड़ा– “अबे, तुम्हीं क्या उछलना जानते हो? क्या मैं नहीं उछल सकता? देखो मेरा प्रताप!” यों कहते ऊपर उड़ा। इसे देख एक और बानर और ऊपर उड़ने लगा।

इस तरह बानरों का समूह एक को देख दूसरे अंतरिक्ष में उडने लगे। इस क्रम में अंगद, नील और सुग्रीव भी उड़े। हनुमान ने सोचा कि यों उछलने का श्रीरामचन्द्र ने आदेश दिया हो, उसने भी एक छलांग मार दिया।

बानरों का कोलाहल देख रामचन्द्रजी वहाँ आ पहुँचे और हनुमान से बोले– “सब कोई आसमान में उड़ रहे हैं, तो
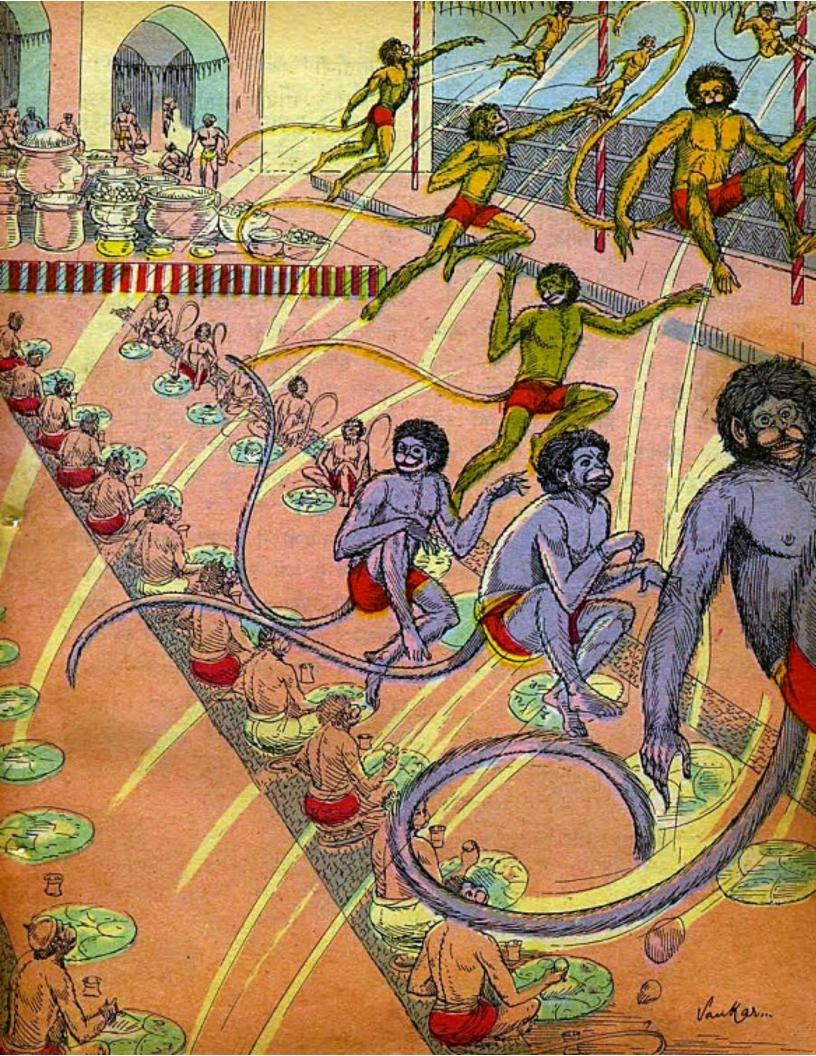
तुम एक ही छलांग मारकर चुप क्यों हो गये?"

"रामचन्द्रजी! इतने सारे महान वीरों के सामने मैं किस खेत की मूली हूँ?" हनुमान ने विनयपूर्वक जवाब दिया।

इस पर जांबवान ने आगे बढ़कर कहा—"रामचन्द्रजी! हनुमान को दूसरों के कहने पर ही उसकी शक्ति एवं सामर्थ्य का पता चल जाता है न?"

तब रामचन्द्रजी एक सफ़ेद कमल हनुमान के हाथ देते हुए बोले—"हमारे वंशकर्ता सूर्य भगवान को यह सफ़ेद कमल समर्पित करना होगा। सूर्य को श्वेत पद्मधर कहकर पुकारते हैं। इसे उनके पास पहुँचाने की सामर्थ्य रखनेवाले तुम अकेले ही हो।"

हनुमान 'रामाज्ञा' कहते सफ़ेद कमल को लेकर एक ही छलांग में आसमान में उड़ा। सूर्य के रथ को पकड़कर बोले—"गुरुदेव! रामचन्द्रजी ने इसे आप को समर्पित करने का आदेश दिया है।" इन शब्दों के साथ सफ़ेद कमल सूर्य भगवान के चरणों पर रखा।

सूर्य ने हनुमान को आशीर्वाद दिया—"चिरंजीवी बने रहो।" फिर अपने हाथ के श्वेत कमल को हनुमान के हाथ सौंपकर बोले—"इसे तुम रामचन्द्र के हाथ सौंप दो। इसके प्रभाव से रामचन्द्रजी के शासन में देश शांति और सुखपूर्वक रहेगा।"

वह श्वेत कमल कभी सूखता नहीं, वह जिस देश में रहेगा, उस देश में समय पर वर्षा होगी। पूर्ण रूप से फ़सलें होंगी। जनता को किसी प्रकार की व्याधियाँ न होंगी। इसके उपरांत हनुमान सूर्य भगवान से आज्ञा लेकर रामचन्द्र के पास लौट आया और उन्हें वह श्वेत कमल सौंप दिया।

रामचन्द्रजी ने अत्यंत आनंद के साथ हनुमान से गले लगा लिया। हनुमान ने सीताजी और रामचन्द्रजी को प्रणाम किया। सीताजी ने हनुमान को आशीर्वाद दिया—"बेटा, तुम चिरंजीवी बने रहो।"
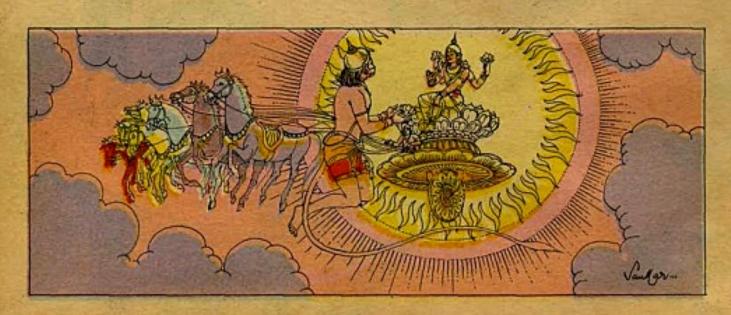
कित्तूर की

रानी चेन्नम्मा

कर्नाटक प्रदेश के कित्तूर नामक राज्य पर रानी चेन्नम्मा शासन करती थी। इतिहास प्रसिद्ध सिपाही विप्लव के तीन दशाब्द पूर्व अपने देश पर आक्रमण करनेवाले ब्रिटीश ईस्ट इंडिया कंपनी के लोग रानी चेन्नम्मा के हाथों में बुरी तरह से पिट गये थे।

मल्लसूर्ज नामक कित्तूर राजा की दूसरी पत्नी रानी चेन्नम्मा है। उनकी पहली पत्नी रुद्रम्मा के एक पुत्र तथा चेन्नम्मा के एक पुत्र पैदा हुये, फिर भी मल्लसूर्ज की मृत्यु के समय रानी चेन्नम्मा ने एक और लड़के को दत्त बनाने का प्रोत्साहन दिया।
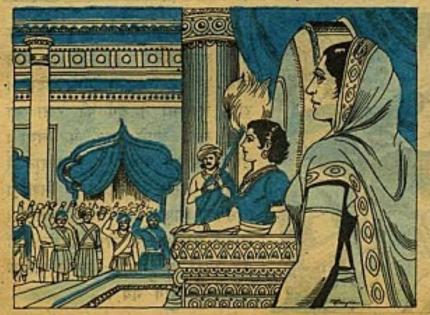
रानी रुद्रम्मा शासन कार्यों में कोई अभिरुचि न रखती थी। इसलिए मल्लसूर्ज की मृत्यु के उपरांत रानी चेन्नम्मा ने रुद्रम्मा के पुत्र का राज्याभिषेक किया और अपने पुत्र को उसका अंगरक्षक नियुक्त गिया। मगर उन दोनों की अकाल मृत्यु हो गई। इस पर चेन्नम्मा ने दत्त पुत्र को राजा घोषित किया।

ईस्ट इंडिया के सैनिकों ने तब तक देश के अनेक प्रदेशों पर अधिकार कर लिया था। कंपनी के प्रतिनिधि थाकरे ने थोड़ी सेना के साथ प्रवेश करके कित्तूर दुर्ग के सामने डेरे डलवा दिये और रानी चेन्नम्मा को समझौते के लिए निमंत्रण भेजा, पर चेन्नम्मा ने इसे अस्वीकार कर दिया।

इस पर थाकरे गुस्से में आ गया। उसने घोषणा की कि कित्तूर के राजा का देहांत हो गया है, इस कारण उनका राज्य कंपनी के अधीन हो गया है। इसके बाद अपने सैनिकों को कित्तूर दुर्ग पर आक्रमण करने का आदेश दिया। दुर्ग की ओर से रानी चेन्नम्मा के सैनिकों ने बंदूकें दाग दीं। बंदूकों की गोलियाँ खाकर थाकरे के अधीनस्थ ब्लाक और टिपटान नामक अधिकारी प्राण खो बैठे।
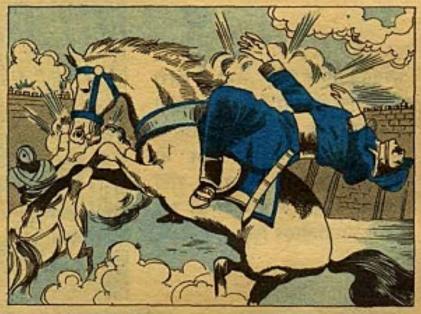
इस घटना को देख थाकरे क्रोध के मारे आग बबूला हो उठा। उसने स्वयं दुर्ग पर हमला बोल दिया। रानी चेन्नम्मा ने दुर्ग की रक्षा का भार स्वयं अपने हाथ में लिया। उनका आदेश पाकर बंदूक़ चलाने में विशेषज्ञ एक सैनिक ने निशाना साधकर थाकरे पर बंदूक़ चलाई। थाकरे घोड़े पर से नीचे गिरकर वहीं पर ठण्डा हो गया। उसके सैनिक घबराकर भाग गये।

इस लड़ाई में ईस्ट इंडिया कंपनी के कई सैनिक रानी चेन्नम्मा के हाथ में बन्दी बने। चेन्नम्मा ने उन्हें किसी प्रकार से नहीं सताया। बल्कि दुर्ग में एक स्थान उन्हें सुरक्षित रखकर उनके लिए आवश्यक सारी सुविधाएँ कर दीं।
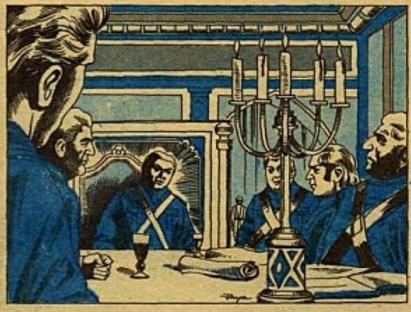
इस हार ने ईस्ट इंडिया कंपनी के मालिकों को विकल बनाया। उन लोगों ने सोचा कि एक छोटे राज्य की रानी के हाथों में हार खाना उनकी प्रतिष्ठा के लिए कलंक की बात है। उन लोगों ने निश्चय कर लिया कि अन्यायपूर्वक ही सही कित्तूर दुर्ग पर अधिकार कर लेना चाहिए।

देश में इधर-उधर बिखरे सैनिकों को कंपनीवालों ने एक जगह इकट्ठा किया और इस बार भारी सेना लेकर कित्तूर के दुर्ग तक पहुँचे। मगर उन लोगों ने दुर्ग पर धावा न बोलकर समझौते का संदेशा भेजा कि बन्दी ब्रिटीश सैनिकों को मुक्त कर दिया जाय तो वे वापस लौट जायेंगे।
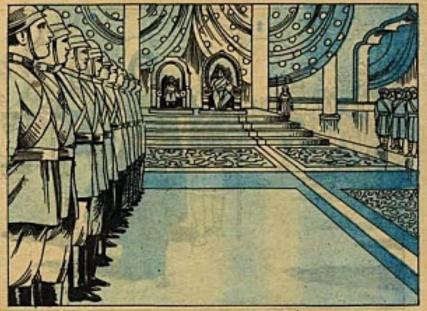
रानी चेन्नम्मा ने इस बात पर विश्वास करके सारे ब्रिटीश बंदी सैनिकों को मुक्त किया। उन लोगों ने रानी चेन्नम्मा के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट की और यह शपथ करके चले गये कि वे अपनी ज़िंदगी भर में कित्तूर पर कभी हमला करने में सहायता न देंगे।

ज्यों ही ब्रिटीश सैनिक मुक्त होकर अपने खेमों में आये, त्यों ही ईस्ट इंडिया कंपनी के सैनिक दलों ने कित्तूर दुर्ग पर घेरा डाल दिया। ब्रिटीश अधिकारियों ने दुर्ग में बन्दी बनकर मुक्त हुए सैनिकों के द्वारा पता लगाया कि कहाँ पर बारूद के गोदाम हैं, फिर क्या था, उन पर गोले बरसाये। एक साथ सारी बारूद में विस्फोट हुआ, इस पर रानी को अपना दुर्ग बचाना संभव न हो पाया।

इस प्रकार दगा देकर ईस्ट इंडिया कंपनी के लोग कित्तूर पर अधिकार कर सकें। रानी चेन्नम्मा बन्दी बनीं। कंपनीवालों ने बताया कि अगर रानी चेन्नम्मा कंपनी के अधिकार को स्वीकार करेंगी तो उन्हें मुक्त करेंगे, पर उन्होंने इस शर्त को इनकार कर दिया। इस प्रकार रानी चेन्नम्मा कंपनी द्वारा बिलहोनगाल नामक दुर्ग में बंदी बनाकर १८२९ में मृत्यु को प्राप्त हुई और इतिहास में अमर हो गई।

कहानी शीर्षक-प्रतियोगिता

कहानी का सुंदर शीर्षक देकर रु. २५ जीतिए!

?

एक गाँव के चार व्यक्ति तीर्थाटन पर चल पड़े। उनमें से एक आदमी बड़ा बातूनी था। वे दिन भर यात्रा करते और रात को किसी के घर के चबूतरे पर सो जाते। एक दिन वे लोग रामापुर नामक गाँव में गौरी नामक एक औरत के चबूतरे पर सो गये।

दूसरे दिन वे लोग एक और गाँव में पहुँचे और उस घर की मालिकिन लक्ष्मी नामक औरत से बोले–"बहन, हम तीर्थयात्री हैं। आज रात को आप अपने घर के चबूतरे पर हमें लेटने की अनुमति दीजिए।"

लक्ष्मी ने न केवल उन्हें अनुमति दी, बल्कि उन्हें ओढ़ने के लिए कंबल और पीने के लिए ठण्डा पानी भी दिया।

इस पर बातूनी ने कहा–"वाह, आप कितनी अच्छी व भली औरत हैं। रामापुर की गौरी ने चबूतरे पर लेटने के लिए हम से पैसे वसूल किये हैं।"

गौरी तो लक्ष्मी की दीदी थी। इस पर वह बोली–"क्या गौरी का चबूतरा सोने का है और मेरा चबूतरा मिट्टी का है? मुझे भी उतने ही पैसे दीजिए, जितने उसे दिये हैं।" इन शब्दों के साथ उसने यात्रियों से पैसे वसूल किये।

★ ★ ★

उपर्युक्त कहानी के लिए बढ़िया शीर्षक कार्ड पर लिखकर, निम्न लिखित पते पर भेजें–"कहानी शीर्षक-प्रतियोगिता", चन्दामामा २ & ३, आर्काट रोड़, मद्रास-६०० ०२६

कार्ड हमें जनवरी १० तक प्राप्त हों और उसमें फोटो-परिचयोक्तियाँ न हों। इसके परिणाम चन्दामामा के मार्च '७८ के अंक में घोषित किये जायेंगे।

नवम्बर मास की प्रतियोगिता का परिणाम: "निशानी अंगूठी की"

पुरस्कृत व्यक्ति: कु. साधनासिंह, टी. ए. लाइन बंगला-१३, चक्कर मैदान, मुजफ़्फ़रपुर

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार २५)

पुरस्कृत परिचयोक्तियां मार्च १९७८ के अंक में प्रकाशित की जायेंगी।

G. Srinivasa Murty

★

M. Natarajan

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियां दो-तीन शब्दों की हों और परस्पर संबंधित हों।

★ जनवरी १० तक परिचयोक्तियां प्राप्त होनी चाहिए, उसके बाद प्राप्त होनेवाली परिचयोक्तियों पर विचार नहीं किया जाएगा।

★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) २५ रु. का पुरस्कार दिया जाएगा।

★ दोनों परिचयोक्तियां कार्ड पर लिखकर (परिचयोक्तियों से भिन्न बातें उसमें न लिखें) निम्नलिखित पते पर भेजें: चन्दामामा फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता, मद्रास-२६

नवंबर के फोटो-परिणाम

प्रथम फोटो : मजबूरी में नाच नचवावे!

द्वितीय फोटो : प्यार में देखो मुंह चटवावे!!

प्रेषक: कु. रश्मि धवन, C/o श्री विश्वम्भरनाथ धवन, ४३६, पूर्वी पनी, फतेहपुर (उ. प्र.)

पुरस्कार की रु. २५ राशि इस महीने के अंत तक भेजी जाएगी।

चन्दामामा के ग्राहकों को सूचना

यदि आप अपना पता बदल रहे हों, तो पांचवीं तारीख से पहिले ही अपनी ग्राहक-संख्या के साथ, अपना नया पता सूचित कीजिये। यदि विलम्ब किया गया, तो अगले मास तक हम नये पते पर 'चन्दामामा' न भेज सकेंगे।

आपके सहयोग की आशा है।

डाल्टन एजन्सीस, मद्रास-६०० ०२६

वार्षिक शुल्क के लिए सम्पर्क करें : डौल्टन एजेंसीज़, चन्दामामा बिल्डिंग मद्रास– ६०००२६

"धीन त न न धीन नमकीन नमकीन"

"ता तई तई ता मीठा मीठा"

Krackjack

खुले कभी नहीं मिलते— नकलों से बच के रहिए!

मीठा नमकीन उत्तम स्वादम्
जय जय पारले जय क्रॅकजॅकम्

क्रॅकजॅक — मीठे नमकीन स्वादवाला एक बस एक बिस्किट

वर्ल्ड सिलेक्शन पारितोषिक विजेता